है। यह रथ अतिशय प्रभा वाला है। खूँटे से बँधा रस्सा जैसे चारों तरफ घूमा करता है उसी प्रकार रश्मियां भी घूमती हैं। उत्तरायण होने पर किरणें घूमती है तो घट जाती है और दक्षिणायन में बढ़ जाती हैं। मण्डलाकार घूमते रथ को जब ध्रुव खींचते है तो सूर्य भी खिंच जाते हैं। जब ध्रुव दोनों किरणों को खींचता है तो सूर्य भीतरी मण्डल में घूमते हैं और सूर्य दोनों दिशाओं के १८० मण्डलों का चक्कर लगाते हैं। जब ध्रुव दोनों रश्मियों को छोड़ देता है तो सूर्य बाहरी मण्डल में घूमने लगते हैं। उस समय वे मण्डलों को ढेकर चलते हुये बड़े वेग से घूमते हैं।

श्री वायु महापुराण का ज्योतिष्प्रचार नामक इक्यावनवां अध्याय समाप्त

बावनवां अध्याय

(ज्योतिष्प्रचार)

सूत जी बोले—देवता, गन्धर्व, अप्सरायें सर्प, ग्रामणी और राक्षस उन सूर्यदेव के रथ पर नियम से दो दो महीने रहते हैं। धाता, अर्यमा आदित्य, पुलस्त्य, पुलह, प्रजापति, वासुकि संकीर्णार सर्प, गन्धर्व, ऋतु स्थली पुञ्जिकस्थला, अप्सरायें, जातुधान, राक्षस चैत्र वैशाख के महीने में सूर्य के गण बन कर उसके साथ रहते है। इसके बाद ज्येष्ठ अषाढ के महीने में ये देव मित्र वरुण, आदित्य अत्रि वशिष्ठ, मैनका सहजन्या अप्सरा, हा हा हू हू गन्धर्व, टथस्वन, तक्षक रम्भसर्प वातधान राक्षस सूर्य के गण बन कर उनके साथ रहते हैं। इसके बाद सावन भादों के महीने और दूसरे देवता उनके गण बनकर सूर्य के साथ रहते हैं। फिर क्वार और कार्तिक के महीने में पर्जन्य पूषा आदित्य, भरद्वाज गौतम ऋषि, विश्वासु-सुरभि गन्धर्व इत्यादि देव ऋषि सूर्य के गण बनकर उनके साथ रहते है। फिर अगहन पूष के महीने में अंश भग आदित्य कश्यप-ऋतु मुनि, महापद्म कर्कोटक सर्प, चित्रसेन गंधर्व, अरिष्ट, नेमि सेनानी इत्यादि सूर्यगण बनकर रथ पर सूर्य के साथ रहते हैं। फिर माघ महीने में और फागुन के महीने में और दूसरे देवता मुनि गण बनकर उनके साथ रहते हैं। सात श्रेणी के चौरासी

देवता स्थानाभिमानी कहे जाते हैं। ये देवता अपने तेज उत्तम तेज वाले सूर्य देव को समृद्ध करते हैं। ऋषि अपने मीठे अभिमित वचनों से सूर्य की स्तुति करते हैं। गन्धर्व, और अप्सरायें अपने नाचगान से उनकी स्तुति करते हैं। सर्प सूर्य के रथ को चलाते हैं। राक्षस उनकी रक्षा करते हैं। और ऋषिमुनि प्रसन्न चित होकर सूर्य के उदय होते ही उनकी सेवा करने लगजाते हैं और उन्हें अस्ताचल पहुंचा देते हैं। इन देवों को जैसा वीर्य और तप, योग, सत्य, धर्म, बल है उसी के अनुसार सूर्य उनके तेज से तृप्त होते हैं। ये सब दो दो महीने सूर्य के पास रहते हैं। ऋषि, देव, गन्धर्व, सर्प, अप्सरा, यक्ष, राक्षस बरसते हुये तपते हुये हवा की तरह बहते हुये जीवों के शुभाशुभ कर्मों को पैदा करते हैं और उनका नाश करते हैं। कभी ये सज्जन मनुष्यों के शुभ कर्मों का नाश करते हैं और कभी पापियों के पाप का नाश करते हैं ये वीर्यशाली देवता वायु की तरह वेग से चलकर सूर्य के साथ दिव्य विमान पर चढ़कर रोजाना घूमते रहते हैं। प्रलय होने तक ये जीवों की रक्षा करते हैं। और मनुष्यों को धूप और वर्षा देकर प्रसन्न रखते हैं। इन देवताओं का स्थानों भूतभविष्य और वर्तमान समय में एक सा रहता है। ये सातों देव चौदहों मन्वतरों के समय में सूर्य के चारों तरफ इसी तरह रहते हैं। सूर्य भगवान ऋतु काल के परिवर्तन की तरह अपनी अपनी किरणों कोबदल २ कर देवता, पितर और मनुष्यों को तपाते रहते है। वे गरमी के दिनों में धूप, जाड़े के दिनों में ठंडक और बरसात के दिनों में पानी बरसा कर दिन रात का विभाग किया करते हैं। सूर्य भगवान अपनी सुषुम्न किरण से चन्द्रमा को बढ़ाते हैं और देवताओं को अमृत पिलाकर संतुष्ट करते हैं। जब चन्द्रमा शुक्ल पक्ष से पूर्ण हो जाते हैं तब कृष्णपक्ष में देवता उनके चन्द्रमा को पी जाहैं। सब अमृत पी जाने के बाद दो कला शेष रहे अमृत को कृष्ण पक्ष के समाप्त होने पर जिस किरण का क्षण करते है, उस अमृत रूपी किरण को पितर लोग स्वधा समझ कर पीते हैं। और फिर उसी अमृतरूपी किरण

को देवता लोग कव्य समझ कर पीते हैं। सूर्य की किरणों से ही जल पैदा होता है और वृष्टि से अन्न और औषधि पैदा होते हैं।

सूर्य देव हरिद्वर्ण के घोड़े पर चढ़कर हजारों किरणों से जल का शोषण करते हैं। सूर्य अपनी किरणों से अन्न की पुष्टि करते है और अन्न से मनुष्यों की तृप्ति होती है। सूर्य देव हरिद्वर्ण के घोड़े पर घूमते हुये जल बरसा देते हैं। वे इस तरह प्रलयकाल तक सूर्य देव एक चक्के के रथ पर सवार होकर मंगलकारक बलवान घोड़ों पर चढ़कर आकाश में घूमते फिरते हैं। उनके छन्द स्वरूप सातों घोडे चक्के की तरफ जुते हुये अपनी इच्छाधीन शरीर धारण करने वाले मन की तरह बहुत तेज वाले ब्रह्मवादी समर्थ हरितपिंगल रंग के एक वार ही रथ में जोते गये हैं। वे घोड़े एक वर्ष में एक सौ अस्सी मंडल की परिक्रमा किया करते हैं। कल्प के शुरू से लेकर कल्प के अन्त तक ये घोड़े सूर्य के रथ में एक ही बार जोते गये हैं। ऋषि मुनि अपने मीठे बचनों से भगवान सूर्य की स्तुति करते हैं। गन्धर्व और अप्सरायें अपने नाचगान से उनकी सेवा करते हैं। और इस तरह सूर्य भगवान अपने घोड़ों पर चढ़कर पृथ्वी की परिक्रमा किया करते हैं।

चन्द्रमा भी तारागणों की गलियों में चला करते हैं। इनकी किरण भी सूर्य की किरणों की तरह बढ़ती है और घटती हैं। चन्द्रमा के रथ में तीन चक्के होते है और दोनों तरफ घोड़े जुते हुये होते हैं। इनका रथ घोड़े और सारथी जल के भीतर से पैदा हुये हैं। चन्द्रमा के रथ में एक सौ अटायें होती है तीन चक्के होते है और उनके रथ में सफेद रंग के घोड़े जुते हुये होते हैं। इनके रथ में दस घोड़े जुते हुये होते है। ये घोड़े भी सूर्य के घोड़े की तरह ही वेगवान समर्थ और कल्प के शुरू से अन्त तक एक ही वार जोते गये हैं। चन्द्रमा के रथ में जुते हुये ये सफेद रंग के घोड़े शंख के समान कान्ति वाले चन्द्रमा के रथ को आकाश में खींचते हैं। वयु, त्रिमना, वृष, राजीवुल, वाम, तुरराय, हंस व्योमी, और मृग इत्यादि चन्द्रमा के घोड़ों

के नाम हैं। वे घोड़े चन्द्रदेव के रथ को खींचते हैं। देवता पितर इनकी सेवा किया करते हैं ये देवों और पितरों से सेवित होकर आकाश में इसी तरह घूमते हैं। शुक्ल पक्ष में सूर्य चन्द्रमा के आगे रहते हैं। फिर जो देवों के पिये अमृत को दिन के क्रम से नित्यप्रति परिपुष्ट कर तृप्त करते हैं। सुषुम्न किरण द्वारा चन्द्रमा की कला उज्ज्वलतर हो जाती है। कृष्ण पक्ष में चन्द्रमा घट जाते हैं और शुक्ल पक्ष में वे पूर्ण होजाते हैं। इस तरह सूर्य के सामर्थ से चन्द्रमा का शरीर घटता बढता रहता है। शुक्ल पक्ष में दिन क्रम से चन्द्रदेव परिपुष्ट हो जाते हैं और वेपूर्णिमा के दिन उज्ज्वल परिपूर्ण मण्डल से प्रकाशित होने लगते हैं। इसके बाद कृष्ण पक्ष की दौज से चौदस तक देव तो जल का सार स्वरूप और रसमय चन्द्र के जल प्रधान और सुधामय सुन्दर मधु को पीते है। वह अमृत सूर्य के तेज से आधे महीने में इकट्ठे होकर पूर्णमासी के दिनों में देवताओं के भोजन के लिये बनाया जाता है कृष्ण पक्ष के शुरू में एक रात देवता, पितर और ऋषि मुनि सूर्याभिमुखवर्ती अमृत का पान करते हैं। इस अमृत के पीने पर उनकी कला फिर धीरे २ नष्ट होने लगती है। तेतीस सौ तीन देवता चन्द्रमा के अमृत को पीते हैं। इन देवों के अमृत पीजाने पर चन्द्रमा की कला फिर बढ़ने लगती है। अतः इसी कारण कृष्ण पक्ष में चन्द्रमा की कला घटती है और शुक्लपक्ष में कला बढ़ने लगती है। इसी तरह देवगण रोजाना आधे महीने तक चन्द्रमा के अमृत को पीकर अमावस्या को जाते है और फिर अमावस्या के आते ही पितर लोग चन्द्रमा के पास आजाते हैं। चन्द्रमा की पन्द्रहवीं कला जो बचती है उसे पितर दोपहर के समय पीते हैं। उस अवशिष्ट कला से जोस्वधा रूपी अमृत निकलता है, उस अमृत को द्विकलात्मक कालमात्र में पितर लोग पीकर उससे एक महीने तक तृप्त रहते हैं। सौम्य, वर्हिषद, अग्नि ष्वात्त और कव्य ही पितर हैं। हे ब्राह्मणो! अमावस्या पर चंद्रमा की पंद्रहवीं कला को पितरों के पीने पर जब तक उस कला का क्षय होता है, तब तक उनका अन्तिम भोग पूर्ण हो जाता है।

चंद्रमा की सोलहवीं कला का नाश नहीं होता है और पक्षादि में चंद्रमा की कला इसी तरह घटती बढ़ती है। इसका मुख्य कारण सूर्य देव ही हैं। और अब हम आगे तारों ग्रहों और राहु के रथ के विषय में कहेंगे।

बुध का रथ शुभ्र वर्ण का है और उसमें जल का तेज स्थित है। वायु की तरह तेज चलने वाले पिशंग वर्ण के आठ घोड़े उसमें जुते हुये हैं। बुध का रथ बादलों की तरह है। उस रथ पर ध्वजा पताका फहरा रही है। तरकस बाण रखे हुये हैं। उस चमकीले रथ के नीचे काठ लगा हुआ है। और उस रथ पर ऊपर लोहे की चादर ढकी हुई है। उस रथ का सारथी भी दिव्य है शुक्र का रथ सूर्य की तरह तेज और सब प्रकार से शोभा सम्पन्न है। इसमें तरह २ के रंगों के मोटे २ वायु की तरह तेज चलने वाले दस घोड़े जुते हुये हैं। ये घोड़े सब घोड़ों में श्रेष्ठ है इन घोड़ों के नाम इस प्रकार है श्वेत, पिशंग, सारंग, नील, लोहित, पीत, कृष्ण, हरित, पृषत और पृश्नि इत्यादि हैं। मंगल का रथ सोने का है। और मंगल के रथ में आठ घोड़े जुते हुये हैं। यह रथ सभी प्रकार से शोभा सम्पन्न है। इनके रथ के लोहित वर्ण के घोड़े अग्नि से पैदा हुये हैं। ये सभी जगह घूमते रहते हैं। मंगल इन्हीं पर सवार होकर सीधी और टेढ़ी गति से राशिचक्र का भ्रमण करते हैं। देवताओं के गुरु वृहस्पति का रथ सोने का है और इनके विशाल घोड़े लाल रंग के हैं। इनके रथ में वायु की तरह तेज चलने वाले आठ घोड़े सभी जगह घूमते है। ये वृहस्पति एक राशि पर एक वर्ष निवास करते हैं। शनिश्चर का रथ काले लोहे का बना होता है। इनके घोड़ों का रंग चितकबरा है और ये घोड़े आकाश में से पैदा हुये हैं और वे अपने रथ पर सवार होकर धीरे धीरे चलते है। राहु के रथ में तमोमय कृष्ण वर्ण के आठ घोड़े जुते हैं ये घोडे रथ को सदा खींचते हैं पर्व के दिनों में सूर्य मण्डल से निकलकर चन्द्र मण्डल अन्दर जाते है। और केतु के रथ के घोडे गधे के रंग की तरह धूसर वर्ण के चितकबरे और धान

के भूसे के धुएं की तरह और वायु की तरह तेज चलने वाले चौंसठ घोड़े जुते हुये हैं। ये सभी वायु किरणों द्वारा ध्रुव से संलग्न हैं आकाश में जितने तारे हैं, उतनी ही वायु की किरणें हैं वायु द्वारा आबद्ध. ज्योतिमण्डल सब जगह घूमता रहता है। रात में ध्रुव तारा को देखने से दिन भर का किया हुआ सभी पाप नष्ट हो जाता है। आकाश में जितने तारे उस ज्योति मण्डल में हैं, उतने वरषों तक ध्रुव को देखने वाला जीवित रहता है। यह शिशुमार सब काल में एक सा ही रहता है। ध्रुव की निचली ठुड्डी उत्तानपाद है यज्ञ अघट हैं धर्म मस्तक है नारायण हृदयहै अश्वनीकुमार दोपादहै वरुण अर्यमा पश्चिम के दो पाद हैं, मित्र गुह्य देश है और पूँछ अग्नि महेन्द्र मरीचि, कश्यप तथा ध्रुव है इस संवत्सर शिशुमार का कभी क्षय नहीं होता है ग्रह ताराओं के साथ चन्द्रमा सूर्य आकाश में नीचे या ऊपर मुँह कर मंडलाकार में स्थिति है। ये सभी ध्रुव द्वाराधारण किये गये हैं। और ये सभी ध्रुव की परिक्रमा किया करते हैं अग्नि और कश्यपों में ध्रुव हीश्रेष्ठ हैं यही एक ध्रुव मेरु पर्वत के मस्तक पर अधोमुख होकर मेरु को देखते हुए घूमते हैं। और इनके साथ ही साथ ज्योतिमंडल आकाश को भी चमकाते रहते हैं।

इति श्री वायु महापुराण का ज्योतिष्प्रचार नाम का बावनवां अध्याय समाप्त हुआ ॥

तिरेपनवां अध्याय

[ज्योतिः संनिवेश]

शशिपायन बोले–ऋषि मुनियों ने संशययुक्त वाणी सुनकर फिर लोमहर्षण सूतजी से पूछा—

ऋषि बोले—आपने जो हमको देवताओं के प्रसिद्ध ग्रहों की कथा सुनाई है वे ग्रह कैसे हैं और उनकी प्रीतिभा कैसी है अब आप हमको इन सबके विषय में बताइये। ऋषियों के इस प्रकार मीठे वचनों को सुनकर एकाग्र चित्त होकर सूतजी कहने लगे कि इसके विषय में जैसा कि विद्वानों ने कहा है उसी के अनुसार हम भी आपको सुनाते हैं। हम आपको चन्द्रमा और सूर्य के घर से पहले अग्नि के विषय

में बताते है— अग्नि तीन तरह की होती है। द्विव्य, भौतिक और पार्थिव। परब्रह्म ब्रह्माजी की रात्रि के बीत जाने पर जब नैश अन्धकार से सब ढका था, कहीं पर भी कोई नहीं तब केवल चार भूत ही स्थित थे। उस समय जो सबसे पहले अग्नि हुये वे पार्थिव अग्नि कहे गये हैं। जो अग्नि, सूर्य में रहकर तपते हैं वे शुचि अग्नि कहे गये हैं और इन्हीं को वैद्युत अग्नि भी कहते हैं। अब हम इन अग्नियों के विषय में कहते हैं। वैद्युत जाठट और सौट अग्नि जल से पैदा हुये हैं इसी लिये जब सूर्य किरणों द्वारा जल को पीते हैं तब ये आकाश में अधिक प्रकाशमान हो जाते हैं। वैद्युत अग्नि अगर वृक्ष में चले जाते हैं, तो वे पानी से बुझते हैं। उसी तरह मनुष्यों के पेट में जो अग्नि देव हैं वे भी पानी से नहीं बुझते हैं। पेट में रहने वाले जो जाठर अग्निदेव हैं वे अधिक प्रकाशवान हैं और जो बिना गर्मी वाला शुक नाम की जो अग्नि हैं वह दिन की अपेक्षा रात को दूर से ही प्रकाशित होता है इसलिये कि सूर्य की किरण अस्ताचल में एक चरण में उसमें प्रवेश कर जाती है। इसके बाद फिर सूर्योदय होने पर पार्थिव अग्नि की गर्मी एक चरण से सूर्य के अन्दर घुस जाती है। इस कारण सूर्य तृप्त होते हैं। प्रकाश और गर्मी गुणसम्पन्न अग्नि और सूर्य का तेज आपस में घुसकर एक दूसरे को दिन रात तृप्त करते हैं। ताप एक दूसरे को बांटने वाले सूर्य की किरणों से जो जल पिया करते हैं, वे विमिश्र पार्थिव अग्नि हैं और ये ही पार्थिव अग्नि दिव्य शुचि अग्नि भी कहलाते हैं। ये घड़े की तरह गोल आकार के हजार किरण वाले हैं। ये अपनी हजार किरण से चारों तरफ का जल खींचते हैं। हिरण्यमय सूर्य गर्मी, शीत, वर्षा बरसाने वाली हजार किरणों से युक्त हैं। सूर्य अनोखे रूप वाली चारसौ किरण वर्षा करती हैं। इन सभी वर्षा करने वाली किरणों के ये नाम—हैं वन्दन, वन्द्य, ऋतन, नूतन और अर्मत नाम से प्रसिद्ध हैं सूर्य की तीन सौ शीतल किरणे हैं जिनसे शीत पड़ता है ये किरणें पीले रंग की हैं और इन तीन सौ पीले रंग की किरणों के ये नाम हैं—दृश्य, मेध्य, वाह्य, हादिनी और चन्द्र इत्यादि। इसके

बाद सूर्य की फिर तीन सौ किरण वर्षा करने वाली हैं इन तीन सौ वर्षा करने वाली किरणों के ये नाम हैं—शुक्ल, ककुभ, विश्वसृत, शुक्लवर्णाकी इत्यादि हैं। सूर्य इन किरणों से मनुष्य, देवता, पितरों को समान भाव से पोषण और तृप्त करते हैं। वे तीन प्रकार की किरणों से सबको तृप्त करते हैं। औषधि से मनुष्यों को तृप्त करते हैं और स्वधा से पितरों को और अमृत से देवताओं को तृप्त करते हैं। इस तरह सूर्यदेव की हजारों किरणों से लोकों की भलाई ही होती है वे किरणें ऋतुके क्रम से उत्ताप, तटी और जल बरसाती हैं। शुक्ल, और तेजवान सूर्य मण्डल, नक्षत्र, ग्रह, और चन्द्रमा के रहने का स्थान तथा उद्भव स्थान है। ग्रह, तारागण, नक्षत्र, चन्द ये सभी सूर्य से ही पैदा हुये हैं। चन्दमा को नक्षत्र के अधिपत(स्वामी) माना गया है और सूर्य को ग्रहों का स्वामी मानते हैं। पाँचों बचे हुये ग्रह, अपनी इच्छानुसार शरीर रखने वाले सामर्थ्यवान हैं। विद्वान लोग ऐसा कहते हैं कि अग्नि सूर्य कहलाता है और जल चन्द्रमा कहलाता है। अब हम आपको और बाकी बचे ग्रहों के विषय में बतायेंगे—

देवताओं के सेनापति स्वामिकार्तिकेय को मंगल ग्रह मानते हैं। विद्वान मनुष्य नारायण को बुध मानते हैं। लोक में भगवान शंकर को ही साक्षात धर्मराज मानते हैं और ये ही धीरे चलने वाले महाग्रह शनैश्चर माने जाते हैं। देवताओं के गुरु बृहस्पति जी और असुरों के गुरु शुक्राचार्य जी दोनों को ही महाग्रह मानते हैं। ये दोनों गुरु प्रजापति ब्रह्माजी के पुत्र हैं। इस सारे संसार में दैत्य, देव और मनुष्य भरे हैं, और इन सभी से पूर्ण यह संसार सूर्य का ही है। हे ब्राह्मणो इन देवताओं का जैसे इन्द्र, उपेन्द्र, रुद्र और चन्द्रादि देवताओं का जो तेज है वह सूर्य का ही तेज है। सूर्य से ही सब पैदा होते हैं और मरने के बाद सब सूर्य में ही मिल जाते हैं। पहले समय में लोकों की उत्पत्ति और विनाश सूर्य से ही हुआ है इसलिये यह संसार पूरा ग्रहमय है और सूर्यदेव चमकते हुये कान्तिमान सुन्दर ग्रह हैं। जिस जगह से बार बार नक्षत्र, ग्रह, दिन, रात, पक्ष, मास, संवत्सर ऋतु युग

इत्यादि पैदा होकर फिर उसी में समाजाते हैं वह सूर्य ही हैं। सूर्य देव के सिवाय और काल की संख्या नहीं करसकता है। सारे संसार को तृप्त करने वाले और जल का हरण करने वाले भगवान सूर्य के बिना स्वर्ग में भी देवताओं के कार्य बन्द हो जाते हैं। हे ब्राह्मणो! सूर्य ही काल है, और सूर्य ही अग्नि है, और सूर्य ही द्वादशात्मा प्रजापति हैं। ये ही तीनों लोकों के चराचर को तृप्त किया करते हैं। ये उत्तम हवा के मार्ग का सहारा लेकर सबको तृप्त करते घूमते हैं। सूर्य तीनों लोकों में तेजस्वी और लोकपालों के आत्मा हैं। सूर्य की हजार किरणों में सात किरण मुख्य हैं –सुषुम्न, हरिकेश, विश्वकर्मा विश्व, संयद्वसु अर्वाग्वसु और स्वटाट् इत्यादि हैं। सूर्य की सुषुम्न किरण चन्द्रमा को आगे बढ़ाती है और यह सुषुम्न किरण टेढ़ीहोकर ऊपर की ओर जाती है। हरिकेश किरण आगे की तरफ रहती है। इन्हीं स्थानों से नक्षत्र पैदा होते हैं। विश्वकर्मा दक्षिण की तरफ रहती है और ये किरण बुध को मजबूत बनाती हैं। पीछे के भाग में रहने वाली विश्वश्रषा किरण शुक्र के स्थान को परिपुष्ट करती है। संयद्वसु किरण से मंगल पैदा हुये हैं। अर्वाग्वसु किरण से बृहस्पति प्रकट हुये हैं। और स्वराट किरण से शनैश्चर जी पैदा हुये हैं। इस तरह सूर्य के तेज से ही सभी की वृद्धि होती है। ये कभी क्षीण नहीं होते हैं इसी कारण इनको नक्षत्र कहते हैं। ये किरणों द्वारा क्षेत्रों को ग्रहण करते हैं इस कारण सूर्य को भी सूर्य नक्षत्र कहते हैं। इसके बाद ये तारागण सुकर्म से फैले हुये हैं इसलिये इनका नाम तारका पड़ा है। दिव्य, पार्थिव और रात्रि सम्बन्धी सभी अन्धकार को दूर करने के कारण महान तेजस्वी का नाम सूर्य पड़ा है। सूर्य और चन्द्रमा का मंडल आकाश में स्थित है। उन मंडलों में चन्द्रमा का मंडल जल प्रधान कहा गया है और सूर्य का मंडल का तेज प्रधान उज्ज्वलाकार कहा गया है। सभी मन्वन्तरों में देवता नक्षत्र और ग्रहों के साथ यहां पर रहते हैं। इसी लिये ये देवग्रह कहे जाते हैं। जो जिस घर में रहते हैं वही उसका नाम होता है जैसे सूर्य देव

सौर स्थान में रहते हैं और चन्द्रमा सौम्य स्थान में, शुक्र शोक्र स्थान में रहते हैं। शुक्रदेव की सोलह किरण हैं ये महान तेजस्वी माने जाते हैं। मंगल लोहित स्थान में रहते हैं बृहस्पति जी बृहत स्थान में रहते हैं और शनैश्चर देव शनैश्चर स्थान में रहते हैं। वे सभी स्थान सूर्य की किरणों से प्रकाशित होते हैं। सूर्य मंडल का विस्तार नौ हज़ार योजन का है और चन्द्रमा के मंडल का विस्तार इस सूर्य मंडल से विस्तार सेदूना है इन दोनो के नीचे राहु रहता हैराहु का मंडलाकर पृथ्वी की छाया से बना है। राहु का स्थान अन्धकार मय बृहत् स्थान है। यह पूर्णिमा के दिन सूर्य मण्डल से निकलकर चन्द्र-मण्डल में जाता है तभी ग्रहण पड़ता है और अमावस्या को पुनः लौटकर चन्द्रमण्डल से निकलकर सूर्यमण्डल में आजाता है। जिस कारण से वह अपनी किरणों को प्रेरित करता है इसी कारण स्वर्भानु कहलाता है। शुक्र चन्द्रमा का सोलहवां भाग है। गुरू शुक्र से एक चौथाई छोटा है और विस्तार मण्डल में एक योजन बड़ा है। पुनः शनि और भौम एक चरण कम हैं। जो तारा नक्षत्रादि स्थूलाकार देखे जाते हैं उनका विस्तार मण्डल प्रायः बुध के समान है। ये नक्ष-त्रादि प्रायशः चन्द्रमा के निकट में ही हैं। तारे नथत्रादि परस्पर दो तीन चार पाँच सौ योजनों के व्यवधान पर स्थित हैं। हम में कोई छोटा और कोई बड़ा है। शनि गुरु और मंगल सभी ग्रहों के ऊपर धीरे धीरे विचरण करते हैं। इन की गति टेढ़ी मेढ़ी है। इनके नीचे सूर्य सोम, बुध और शुक्र हैं जो तेज चलने वाले हैं। वास्तव में सत्य यह है कि जितने तारे हैं उतने ही नक्षत्र हैं। पुण्यात्मा गृहों के सब ज्योतिस्वरूप घर हैं। ब्रह्मा ने कल्प के अदिमें इन स्थानों का निर्माण किया है ये सब प्रलय काल तक वर्तमान रहते हैं। ये स्थान बारंबार होते और नष्ट होते हैं। सभी मन्वन्तरों में ये अभिमानी देवों के साथ वर्तमान रहते हैं सहस्र किरण वाले विवस्वान का स्थान अग्निमय शुक्ल वर्ण है और हजार किरण वाले चन्द्रमा का भी स्थान शुक्लवर्ण का है लेकिन जलमय हैपांच किरण वाले बुधका स्थान कष्ट वर्ण और

जलमय है सोलह किरण वाले शुक्र का भी स्थान जलमय है। नौ किरण वाले मंगल का रंग लाल और जलमय है। आठ किरण वाले शनि हैं बृहस्पति राहू का स्थान जीव जन्तुओं को कष्टकारक और तमोमय है। इसके बाद जो तारे हैं वे सब एक किरण वाले हैं। उनका स्थान जलमय है। ये तार पवित्र कीर्तिमान पुरुषों के आश्रम हैं। शुक्लवर्ण के हैं। ये कल्पके आदि में विधाताने दीप्त विधानसे निर्मित किये हैं। ये बहुत दूर हैं पर किरणों द्वारा शीघ्र दीखने लगते हैं। सूर्य जब नागवीथी में दक्षिणायन होकर चलने लगते हैं तब ये भूमि लेखा द्वारा ढक जाते हैं एवं अमावस्या और पूर्णिमा में नहीं दीखते। इनका अस्त भी शीघ्र हो जाता है। चन्द्रमा के उत्तरायण होने पर ये दीखते हैं किन्तु दक्षिणायन में कभी ये दिखाई देते हैं और कभी नहीं। नक्षत्रों की चाल के अनुसार सूर्य चन्द्र दोनों जब विषवत रेखा पर होते हैं तब दोनों का अस्त और उदय समान कालमें ही होता है।

सूर्य देव जब दक्षिण दिशा में गमन करते हैं तब वे सब ग्रहों से नीचे चलते हैं उस समय चन्द्रमा सूर्य के ऊपर अपने मण्डल का विस्तार करके घूमते हैं। नक्षत्र-मण्डल चन्द्रमा से और ऊपर विचरण करते हैं नक्षत्र से ऊपर बुद्ध, बुद्ध से ऊपर गुरु, गुरु से ऊपर शनि, शनि से ऊपर सप्तर्षि मण्डल और उससे ऊपर ध्रुव हैं। तारे और ग्रह का अन्तर ऊपर की ओर क्रमशः दो लाख योजन है। इस प्रकार हमने ग्रह नक्षत्र पृथ्वी, ज्योतिष, द्वीप, सागर, पर्वत, वर्ष, नदी और निवासियों का वर्णन किया। ये सब ग्रह पहले नक्षत्रों के रूप में उत्पन्न हुये हैं। नक्षत्रों के बीच श्रविष्ठा और अयनों में उत्तरायण श्रेष्ठ हैं। पांचों वर्षों में संम्वत्सर प्रथम है। ऋतुओं में शिशिर और महिनों में माघ, पक्षों में शुल्क, तिथियों में प्रतिपदा और दिन रात में दिन सबसे आदि में हुए हैं ऐसा कहा गया है।

मुहूर्तों के बीच में रौद्र मुहूर्त है और काल समूह के बीच में निमेषात्मक काल ही आदि हैं। श्रवण से लेकर श्रवणा तक पांच वर्षों का एक युग होता है। जो सूर्य की गति से चक्के की तरह घूमता है।

अतः इसी कारण ये सूर्य ही काल माने जाते हैं। इन्हीं को ईश्वर मानना चाहिए। ये ही चारों तरफ की चराचरों के बनाने बिगाड़ने वाले हैं। ईश्वर ने इस तरह लौकिक व्यवहार को मजबूत करने के लिए ज्योतिष चक्र को बनाया है। ये ज्योतिष चक्र सभी दिशाओं में अन्त तक वृत्ताकार आकार में स्थिति है। ये सभी श्रवण में पैदा हुए हैं ये सभी ध्रुव में संलग्न रहते हैं। यह ज्योतिष चक्र विश्व रूपी प्रकृति का एक अनोखा विपरिणाम है ज्योतिर्मण्डल का कोई भी मनुष्य चर्मचक्षु से देखकर ठीक ठीक वर्णन नहीं कर सकता है इसीलिए विद्वान मनुष्य शास्त्र अनुमान और प्रत्यक्ष एवं उत्पत्ति के द्वारा सोच समझकर इनसे भक्ति और सेवा करनी चाहिए। हे ब्राह्मणो ! ज्योतिस्तत्व के विषय में ये पांच कारण बताए जाते हैं ये पांच कारण चक्षु, शास्त्र, जल, लिखित ग्रन्थादि और गणित इत्यादि पांच कारण हैं।

श्री वायु महापुराण का ज्योतिः संनिवेश नामका तिरेपनवां अध्याय समाप्त हुआ ॥ ५३ ॥

चौवनवाँ अध्याय

[नीलकंठ भगवान की स्तुति]

ऋषि बोले—हे पवित्र बुद्धि वाले सूत जी ! अब आप हमको इनके विषय में अच्छी तरह से समझा कर सुनाइए। ब्रह्म पुरोगामियों का पवित्र उत्तम व्याख्यान का किस देश और किस काल में वर्णन हुआ है उसे आप हमें बताइये।

सूत जी बोले—व्रत, नियम करने वाले हे श्रेष्ठ ब्राह्मणो ! पूर्व काल में जिस प्रकार वायु देवता ने हजार वर्ष के यज्ञ में संसार के आयु स्वरूप का वर्णन बताया है और जिस प्रकार हमने सुना है, उसी प्रकार हम आप लोगों को सुनाते हैं। भगवान शंकर जी का नाम नीलकंठ कैसे पड़ा। पर्वत राज हिमालय के उत्तर शिखर पर सरोवर, नदी, तीर्थ, देवमन्दिर कन्दरा, उपवन, गिरिशिखर इत्यादि

स्थानों में उत्तम व्रत करने वाले देवताओं के भक्त श्रेष्ठ ऋषि मुनि विधि पूर्वक भगवान शंकर जी की स्तुति किया करते हैं वे चारों वेदों से, नाच गान से, पूजा से, ओंकार के जपने से और नमस्कार इत्यादि करके भगवान शिव की उपासना हमेशा करते रहते हैं। एक समय सूर्य देवता ज्योति मण्डल के बीच में आगये. नियम अनुष्ठान व्रत इत्यादि करने वाले ऋषि मुनियों की दशा भी बिगड़ गयी, इस पीड़ा से सभी को कष्ट होने लगा। तब इसी समय वायु देवता कहने लगे नील कण्ठ भगवान को प्रणाम करता हूँ। व्रत इत्यादि करने वाले श्रेष्ठ ऋषि मुनियों ने वायुदेव के मुख से ऐसा सुनकर उनसे पूछा। वे ऋषि मुनि अठासी हजार थे तथा वायु और पत्तियों के खानेवाले तथा सूर्य के साथ चलने वाले थे।

ऋषियों ने कहा—हे श्रेष्ठ सुआत्मा वायुदेव! आपने जो भगवान शङ्कर की नीलकंठ नाम से स्तुति की है, यह पवित्रात्माओं वाले श्रेष्ठ ऋषि मुनियों के लिये पवित्र तथा अत्यन्त गुप्त है। अब आप कृपा करके हमको यह कथा सुनाइये। भगवती सती के पति भगवान शङ्कर का कण्ठ किस तरह नीले वर्ण का होगया। हम यह कथा आप ही के मुख से सुनना चाहते हैं, क्योंकि वायु द्वारा प्रेरित होने पर ही वचनों के उच्चारण में ही सफाई आती है। हे वायु देव! जब आप वर्ण स्थान में जाते हैं, तब शब्दों का उच्चारण होता है। आप ही से शरीर में ज्ञान, उत्साह और प्रवृत्ति पैदा होती है। शरीर से आपके निकल जाने पर वर्णों का उच्चारण समाप्त हो जाता है, मुख से वचन नहीं निकलते और शरीर रखना भी कठिन हो जाता है। आपकी सर्वत्र गति है। हे वायुदेव! अब आप इसी के विषय में बताइये कि किस प्रकार शङ्कर जी का कण्ठ नील वर्ण का हुआ।

श्रेष्ठ पवित्र आत्मा वाले ऋषियों के शब्दों को सुनकर सब लोकों के पूज्य और महातेजस्वी श्री वायु देव बोले—

हे ब्राह्मणो! सतयुग में प्रजापति के मानस पुत्रों में एक वशिष्ठ नाम के ब्राह्मण भी थे जो बहुत विद्वान और धर्मात्मा थे। उन्होंने

श्रद्धा पूर्वक स्वामिकार्तिकेयजी से पूछा। स्वामिकार्तिकेयजी का वाहन श्रेष्ठ मयूर है वह पार्वतीजी के पुत्र और सेनापति हैं वे मां पार्वती के मन को खुश करने वाले छदन रूपधारी बालक हैं। महिषासुर की स्त्रियों के आंखों के काजल को चुरालाये हैं, क्रौंच के जीवन का हरण करने वाले हैं।

वशिष्ठजी बोले—

हे पार्वती के पुत्र हम आपको प्रणाम करते हैं। उमागर्भ, अग्निगर्भ गंगागर्भ आपको प्रणाम करते हैं। शरगर्भ, कृत्तिकासुत आपको प्रणाम है। आपके छः मुख और बारह नेत्र हैं। हम आपको प्रणाम करते हैं। हे शक्ति पताका और दिव्य घंटा धारण करने वाले आपको प्रणाम है। इस तरह वशिष्ठ ने स्वामीकीर्तिकेयजी की स्तुति करके उनसे पूछा। "श्री शंकरजी के इन्दु और कुन्द की तरह सफेद कण्ठ में जो काजल की तरह शुभ नीलिमा दिखाई पड़ता है, यह क्या है? हे महाभाग! आप हमको इस पवित्र पापनाशिनी कथा के विषय में विस्तार से बताइये। हम आपके भक्त हैं, आपके सेवक हैं, आप हमारे पूज्य हैं। अतः इसी कारण हम आपसे पूछ रहे हैं। वसिष्ठ जी के वचनों को सुनकर राक्षसों की सेना पर विजय पाने वाले महा तेजस्वी स्वामिकार्तिकेयजी बोले—हे महात्मा वसिष्ठजी! मां पार्वती के गोद में बैठकर जैसा हमने सुना है, वैसा ही हम आपसे कहते हैं आप सुनिये। देवाधिदेव भगवान शंकर जी का और मां पार्वती के साथ जो संवाद हुआ है उसे हम आपसे कहते हैं हे ब्राह्मणों में श्रेष्ठ! तरह तरह की धातु से युक्त चित्रित, शिलातल से मनोहर, दिव्य सुवर्णमय चक्रवाक से शोभित, निकले हुये बाल सूर्य की तरह प्रकाशवान, हीरा और स्फटिक की सीढ़ियों से घिरे, मतवाले क्रौंच और मयूरों की आवाज से जिसकी कन्दरा गूँज रही हो, अप्सराओं से व्याप्त, किन्नरों से शोभित कोकिल की कूहू-कूहू से मधुर सिद्ध चारण से सेवित, नन्दी के आवाज से जिस कैलाश

पर्वत का सुन्दर शिखर गूंज रहा हो, कहीं मेघ के गर्जन से, कहीं हाथी के दहाड़ने की आवाज से, कहीं पर स्त्रियां हिंडोला झूल रही हैं। कहीं महादेव जी के गण हँस रहे हैं। उनके शरीर से विचित्र गन्ध निकल रही है, जिससे गणेश्वर खेल रहे हैं। ऐसे स्थान पर छोटे बडे, दुबले, मोटे, बडे बडे पैर वाले, मोटी जांघ वाले, लम्बे ओठ वाले, बिना पैर वाले, बिना शिर वाले एक पैर एक हाथ वाले, गोकर्ण, महाकर्ण, अकर्ण बहुत से नेत्र वाले, बिना नेत्र वाले, अन्धे भूत गणों से सहयोगी भूतपति महादेवजी घिरे हुए हैं। ऐसे समय शुद्ध मणि और मुक्ताओं से शोभित, सुवर्णमय, मनोहर शिलातल पर सुख पूर्वक बैठे हुए कामदेव के शरीर को जलाने वाले महादेव जी से भगवती पार्वती जी ने पूछा—

पार्वती जी बोलीं—हे संसार के मनुष्यों का कल्याण करने वाले वृषभध्वज महादेव भगवान! आपके कन्ठ में जो यह नीलिमा है, यह किस कारण से हुई है? यह सब किस कारण से हुई है। यह सब कथा आप हमको अच्छी तरह से बताइये, हमको आश्चर्य हो रहा है। महादेव जी बोले—देवी पार्वती के वचनों को सुनकर पार्वती प्रिय शंकर जी उस पवित्र शुभ दायिनी कथा को इस तरह कहने लगे—पहले किसी समय देवता और राक्षस मिलकर अमृत निकालने के लिए क्षीर सागर को मथ रहे थे। लेकिन अमृत निकालने से पहले अग्नि और काल के समान प्रभावाला विष निकल आया। हे वरानने! उस विष को देख कर देवता और राक्षसों के मुँह सूख गये और वे सब ब्रह्मा जी के पास गये। महा तेजस्वी ब्रह्मा जी ने सब को डरे हुए देख कर कहा—"हे महाभाग! आप सब डर क्यों रहे हो, आपका मन दुखी क्यों हो रहा है। हे देव! हमने आप लोगों के लिए ही अष्ट गुण ऐश्वर्य की सृष्टि की है। फिर आपके ऐश्वर्य का किसने हरण कर लिया है। आप सब त्रिलोकी के ईश्वर हैं, आपको कोई भी दुख नहीं होता है। आप हमें शीघ्र ही बताइये कि आपको कौन सा

दुख है। प्रजापति ब्रह्माजी की बातों को सुन कर ऋषि, प्रमुख देव और राक्षस कहने लगे कि—देवता और राक्षसों के द्वारा जो क्षीर सागर मथा जा रहा था कि उस में से एक भंयकर विष निकला, जो संवर्त्तक अग्नि की तरह कन्तिमान था, जो भुजंग, भृंग नीले मेघ की तरह काला है, वह विष काल मृत्यु की तरह, युगान्त काल में तीनों लोकों को जलाने वाली सूर्य की तेज किरण की तरह सभी दिशाओं में फैल रहा है। उस विष से जो कालाग्नि की तरह कान्ति निकल रही है उससे सभी लाल और गोरे शरीर वाले विष्णु काले होगये हैं। लाल और गोरे विष्णु को काला होते देखकर हम सभी डर गये हैं। और अब आप की शरण में आये हैं। प्रजापति ब्रह्मा जी ने देवता और राक्षसों की बातों को सुन कर संसार के हित के लिये कहा—हे तपस्वी ऋषियो और सभी देवताओ! आप लोग सुनिये—इस सागर के मथने से जो कालाग्नि के समान कालकूट विष निकला है उसे भगवान शंकर जी के सिवाय कोई और नहीं सह सकता है भगवान विष्णु जी भी उससे काले हो गये, उस विष के तेज को हम भी नहीं सह सकते हैं यह कह कर पदायोनि प्रजापति ब्रह्माजी ने अयोनि होने पर भी भगवान शंकर जी की स्तुति करने लगे। हे अनेक नेत्र वाले विरुपाक्ष, हे त्रिनयन, हे पिनाक और वज्र धारण करने वाले! आपको नमस्कार है। हे त्रैलोक्य नाथ, भूतपति आप देवताओं के शत्रुओं का नाश करने वाले हैं, आप ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र हैं। सांख्य योग और भूत ग्राम आप ही से बना है। हम आपको प्रणाम करते हैं। आप त्रिपुरारी, वन्दनीय माताओं के पति, बुद्ध, शुद्ध, कपाली, कराल, शंकर, विरुप, कमल धारण करने वाले तीनों लोकों के विधाता, चन्द्रमा, वरुण आप ही। हैं आपको नमस्कार है आपउग्र, अग्र, एक रूप, शिव, वरद, नित्यानित्य, व्यक्त, अव्यक्त चिन्त्य, अचिन्त्य, भक्तों के दुखों का नाश करने वाले हैं। आपको नमस्कार है। आप उमा प्रिय हैं। दिग्वस्त्र, शिखण्डी और अनेक तरह के गुणों से शोभित भगवान शंकर जी आपको नमस्कार है।

महादेव जी बोले—कि हे पार्वती जी ! प्रजापति ब्रह्मा ने इस तरह स्तुति करके प्रणाम किया और कहने लगे कि जिनके सिर पर गंगाजल बहता है, वही, अति सूक्ष्म और योग से अचिन्त्य देव देव भगवान शंकर जी हमारी भक्ति और श्रद्धा जानकर प्रकट हों जिस प्रकार चन्द्रमा सामने रहकर भी किसी का आह्वान नहीं चाहते हैं। इस तरह लोककर्ता प्रजापति ब्रह्माजी से नाना तरह से वेद वेदांग से तथा स्तोत्रों से स्तुति करने पर हम प्रसन्न हो गये और प्रजापति पितामह ब्रह्माजी से सूक्ष्मरूप में कहा—कि हे पितामह भगवन्, लोककर्ता सुव्रत, ब्रह्माजी हम आपका कौनसा कार्य करें। हमारे इस तरह कहने पर प्रजापति ब्रह्माजी बोले कि हे भगवन् ! देवता और राक्षस दोनों क्षीर सागर का मन्थन कर रहे थे, कि नीले मेघ की तरह अधिक जहरीला भयंकर विष निकला। वह विष संवर्तक अग्नि की कान्तिमान था उस विष को देख कर ऐसा मालूम पड़ता था कि प्रलयकाल आगया है और सूर्य की किरणें तीनों लोकों को जलाने के लिये फैल गयीं। इस तरह काल और अग्नि के समान कान्ति मान विष को सामने देखकर हम सभी डर गये। हे कमल-नयन भगवान महादेवजी ! आप उस विष को संसार के कल्याण के लिये पीलीजिये। आप प्रभु सर्व शक्तिमान हैं। इस विष के पीने में आपके सिवाय और कोई तीनों लोकों में भी समर्थ नही हैं। हे वरानने ! प्रजापति ब्रह्माजी के इस तरह शब्दों को सुन कर उनकी बात मानली और देवताओं के लिये भी अधिक दुखदाई काल की तरह महाघोर विष को पी लिया। उस विष के पीने से उसी क्षण हमारा कन्ठ नीला होगया। कमल पत्र के समान और लपलपाते नागराज तक्षक की तरह उस विष को कण्ठ में लगा देखकर प्रजापति ब्रह्माजी ने कहा कि हे भगवन् ! आप इस कण्ठ से अधिक शोभित हो रहे हैं। प्रजापति के वचनों को सुन कर देवता, राक्षस, गन्धर्व, भूत पिशाच उन सभी के सामने ही हमने उस घोर विष को कण्ठ में रख लिया। हे गिरि पुत्री पारवती ! तभी से हमारा नील कण्ठ नाम पड़ा है।

हे पारवती ! उस कालकूट के समान तेज विष हमारे कण्ठ में रखने पर सभी देवता और राक्षस अत्यन्त आश्चर्यवश होगये । हे गज गामिनी ! तब सभी देवता, राक्षस, प्रेत पिशाच गन्धर्व हमारी हाथ जोड़कर प्रार्थना करने लगे और बोले कि—हे भगवन् ! आप अधिक बल वीर्य, तथा पराक्रमशाली हैं आप प्रभु धन्य हैं । आप परब्रह्म परमात्मा हैं आपही विष्णु हैं आप ही ब्रह्माजी हैं आपका योगबल और प्रभुत्व धन्य है । आप चराचर संसार के पालने वाले और प्रलय काल में सबकी रक्षा रने वाले हैं ।

तब सभी देवताओं ने भगवान शंकर जी की स्तुति की और उनको हाथ जोड़ कर प्रणाम किया और फिर सभी अपने अपने विमनों पर चढ़ कर मेरुप्रस्थ की तरफ चले गये यह सभी लोकों में प्रसिद्ध नीलकण्ठोपाख्यान परम गुह्य तथा पवित्र है । स्वयं प्रजापति ब्रह्मजी ने इस पवित्र कथाको सुनाया है जो कोई भी इस पवित्र कथा को पढ़ता और दूसरों को सुनाता है उसका जो फल होता हम उसको कहते हैं हे वरानने ! शरीर में किसी भी प्रकार का विशेष विष चढ़ जाय तो वह इस कथा के प्रभाव से शीघ्र ही नष्ट हो जाता है यह कथा बुरे सपनों को नष्ट करती है । राज सभा में और स्त्रियों के बीच में सम्मान होता है । युद्ध में विजय होती है । घर में धन-धान्य भरा रहता है सभी प्रकार की सुख शान्ति रहती है । हे वरानने ! जो मनुष्य नीलकण्ठ, हरितश्मश्रु, त्रिशूलपणि, वृषयान और पिनाकधृक नाम को शरीर में धारण करता है, वह नादिया नन्दी के समान बलवान और पराक्रमशाली होकर श्री सम्पन्न हो जाता है । हे पार्वती ! जो मनुष्य हममें भक्ति और श्रद्धा रखकर हमारी कथा को पढ़ता और सुनता है, वह इस लोक और परलोक में सभी तरह से सामर्थ्य वान हो जाता है । अब हम तुमको यह बताते हैं कि वह कैसा सामर्थ्यवान होता है । ब्राह्मण वेदाध्यायी होता है, क्षत्रिय जय लाभ करता है । वैश्य धन लाभ करता है । शूद्र सुख पाता है । रोगी निरोग हो जाता । बन्दी बन्धन से मुक्त हो जाता है । कन्या को

सुन्दर पति मिलता है गर्भवती स्त्री के सुन्दर पुत्र पैदा होता है। इसका इतना फल मिलता है जितना कि एक लाख गौओं के दान करने से होता है, वह महादेवजी की कथा सुनने से मिलता है। सम्पूर्ण आधा या एक पाठ याद करने से मनुष्य शिव लोक को जाता है। हे पार्वतीजी, इस कथा को मैंने ब्रह्माजी से कहा था। सो मैंने यह तुम्हारे प्रति वर्णन की है। इस कथा को कह कर स्वामीकार्तिकेय को प्यार करने वाले शंकर जो नन्दी पर सवार होकर किष्किन्धक गुहा की ओर चल दिये। ब्राह्मणो! वायु देव इस पाप नाशिनी, महापद देने वाली कथा को कह कर सूर्य पथ की ओर चले गये। और अब हमने भी आप लोगों को यह कथा सुनादी।

[इति श्री वायु महापुराण का चौवनवाँ नीलकण्ठ नामका अध्याय समाप्त हुआ]

पचपनवाँ अध्याय

ऋषियों ने कहा—हे श्रेष्ठ बुद्धि वाले सूतजी! अब आप हम लोगों के इनके विषय में कुछ सुनाइये, हम सुनना चाहते हैं गुण, कर्म और प्रभाव में सबसे बड़ा और श्रेष्ठ कौन है, और किनका ऐश्वर्य प्रभाव सबसे अधिक है।

सूतजी बोले —हे द्विज! हम आपको इसके बारे में एक पुरानी कथा सुनाते हैं। देवाधिदेव भगवान महादेवजी का क्या महात्म्य है, और उनका क्या प्रभुत्व है। भगवान विष्णु ने भी त्रिलोकों के विजय के अवसर पर जिस प्रकार कहा है—त्रिलोकी के स्वामी भगवान विष्णु ने पाताल में जाकर जब बलि को बाँध लिया, तो इन्द्र देवता बहुत खुश हुये, कारण कि सब राक्षस मर चुके थे। उस समय भगवान को देखने के लिऐ इन्द्र आदि सभी देवता क्षीरसागर के पास आये। क्षीरसागर के पास जाकर भगवान हरि कि स्तुति करने लगे और वहाँ जाकर सिद्ध, ऋषि, मुनि, अप्सरायें, गंधर्व, नाग किन्नर,देवर्षि,नदी और पर्वत सभी उनकी स्तुति करने लगे। हे भगवान विष्णु! आप धन्य हैं, आप ही विधाता हैं, आप ही लोकालोक के सृष्टि कर्ता हैं।

हे भगवान् ! आपके ही प्रभाव से तीनों लोकों का शुभ कार्य होता है। हरि ! आपने राजा बलि को बांध कर सभी राक्षसों को जीत लिया है। जब देवता और बहुत से सिद्ध इत्यादि भगवान विष्णु की स्तुति कर चुके तो भगवान विष्णु बोले कि—अब हम इसका विशेष कारण तुम लोगों से कहते हैं आप सब ध्यान पूर्वक सुनिये। जो सब लोकों के सृष्टि कर्त्ता हैं, काल हैं, और काल के भी सृष्टा प्रभु हैं। जिन्होंने माया से ब्रह्माजी के साथ सब लोकों की सृष्टि की है। उन्हीं के प्रभाव से हमने विजय प्राप्त की है पहले समय में चारों तरफ अन्धकार ही अन्धकार था और सभी जीव हमारे उदर में निवासते थे उस समय हम भी हजार रूप धारण करके शंख चक्र गदा पद्म धारण करके हम जल में सो रहे थे कि हमने दूर से ही एक योगी पुरुष को देखा, वे महान पुरुष, अत्यन्त कान्तिमान, प्रभा से युक्त चतुर्मुखी पुरुष कमण्डुल और चर्म धारण किये हुये थे। वे दिव्य पुरुष एक निमेष में ही हमारे पास आ गये। तब उस समय तीनों लोकों के पूज्यनीय प्रजापति ब्रह्माजी हमसे बोले कि हे प्रभो ! आप कौन हैं, और कहां से आकर आप शयन कर रहे हैं। यह सब बात आप हमको बताइये। हम प्रजापति ब्रह्मा, चतुरानन, तीनों लोकों के कर्त्ता स्वयंम्भू हैं। तब ब्रह्माजी की बातों को सुन कर भगवान विष्णु बोले कि हम सभी लोकों के कर्त्ता और पालन करने वाले तथा बार बार संहार करने वाले हैं। हम दोनों आपस में इसी प्रकार बातचीत कर रहे थे कि उसि समय हम दोनों ने उत्तर कि तरफ एक जलति हुई ज्योति दिखाई पड़ने लगी। हे श्रेष्ठ ऋषियों ! हम दोनों उस उस जलती हुई ज्योति को देखकर अचम्भित हो गये। उस जलती हुई ज्योति के तेज से सम्पूर्ण जलसागर लहरा उठा, और वह अनोखा तज धीरे धीरे बढ़ने लगा और फिर हम दोनों उस ज्योति का अन्त देखने की लालसा से उसी तरफ चल दिये। हम दोनों ने देखा कि वह ज्योति पृथ्वी और स्वर्ग लोक पार कर रही थी, उस ज्योति के बीच में तेज से चमचमाता हुआ एक अस्पष्ट शिवलिङ्ग दिखाई दिया।

उस ज्योति मण्डल के बीच में का वह शिव लिङ्ग न सोने का था न पत्थर का न चांदी का ही था, वह अचिन्त्य, कभी लक्ष्य होता तो कभी अलक्ष्य होता अत्यन्त ओजपूर्ण, महाघोर प्रतिक्षण बढ़ने वाला वह शिव लिंग प्राणियों को भयभीत करने वाला अपने तेज से अधिक बड़ा मालूम पड़ता था। इसे देख कर मैंने प्रजापति ब्रह्माजी से कहा कि इस भंयकर रूप वाले लिंग का पता लगाना चाहिये। मेरी बात सुनकर ब्रह्माजी बोले कि प्रभु! आप आलस्य छोड़ कर इसके निचले भाग की तरफ जाकर पता लगाइये और मैं ऊपर की तरफ जाकर पता लगाता हूँ। इस रहस्यमय लिंग के अन्त का पता लगाना चाहिये। इस तरह हम दोनों ही उसका पता लगाने के लिये चल दिये। इस तरह एक हजार वर्ष तक उसके अन्त का पता नहीं चला, तब हम दोनों भयभीत हो गये और चलते चलते थक गये और तब हम दोनों उसी महासागर के पास आ गये। हम दोनों भगवान शिव की माया से मोहित होकर किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गये, हमारी चेतना लुप्त हो गयी, और तब हम भगवान शंकर की स्तुति करने लगे—

हे देवाधिदेव भगवान शंकर! अपको नमस्कार है। भूतपति, जगदीश, शाश्वत, सिद्ध योनि आपको नमस्कार है। हे प्रभु! आप परमेष्ठी, परब्रह्म, परमेश्वर हैं। आपकी माया का कोई पार नहीं पा सकता है। आप संसार की सृष्टि करने वाले हैं। भगवान् आपको नमस्कार है आप ही यज्ञ हैं, आप ही ओंकार हैं, आप ही परमपद हैं। आप ही प्राणियों अव्यय आदि कारण हैं आप वायु का गुण, रूप, रस और चन्द्रमा हैं। आप ही काल हैं आपही सृष्टि के रचने वाले हैं हे प्रभो! आपको बार बार नमस्कार है। हे प्रभो! बारह आदित्य आठों वसु, उन्नचासों मरुत, ग्यारह रुद्र सभी आपसे पैदा हुये हैं। हे महेश्वर! आपको नमस्कार है। आप रुद्र हैं, पिनाक, सायक और चक्र धारण करने वाले हैं। भस्म से शोभित अंगों वाले तथा कामदेव को जलाने वाले भगवान शंकर जी आपको नमस्कार है। हे

नीलकन्ठ हिरण्य का चीर धारण करने वाले तथा हिरण्य की माला पहनने वाले प्रभो, आप को प्रणाम है, आप दिव्य हजार हाथों वाले हैं तथा नाच गान को पसन्द करने वाले प्रभो ! आपको नमस्कार है। हम दोनों के इस प्रकार स्तुति करने पर भगवान शंकर जी वहां प्रगट हुये। उस समय शंकर जी, अधिक प्रसन्न मुख होकर हमारी तरफ देख कर कुछ बोलते हुये ऐसे शोभित हो रहे थे, कि अपने हजारों करोंड़ों मुखों से आकाश को निगल रहे हों। उनका अत्यन्त शोभायमान शरीर तरह तरह के आभूषणों से भूषित हो रहा था, वह भगवान वृषभ पर सवार थे, कृष्ण मृग चर्म का वस्त्र पहने तथा सर्पों का जनेऊ पहने और उनकी आकृति अति घोर थी। लेकिन ऐसा होने पर भी वे देवताओं के लिये भयंकर नहीं थे। उस समय भगवान शंकर जी ने बहुत जोर से गर्जना की, उस गर्जना से सभी डर गये। तब भगवान शंकर ने कहा कि हे देवों में श्रेष्ठ देव ! हम तुम दोनों पर प्रसन्न हैं और भय को छोड़ कर मेरी महामाया को देखो, पूर्व काल में तुम दोनों सनातन पुरुष मेरे शरीर से ही पैदा हुये हैं लोक पितामह ब्रह्माजी मेरे दाहिने हाथ हैं और यह भगवान विष्णु मेरे बायें हाथ हैं। मैं तुम दोनों पर प्रसन्न हूँ और आपको मन इच्छित वरदान देता हूं। भगवान शंकर जी की ऐसा मीठी वाणी सुनकर प्रजापति ब्रह्माजी और भगवान विष्णु दोनों ही बहुत प्रसन्न हुये। और भगवान शंकर जी के चरणों में गिरकर बार बार प्रणाम करने लगे, और कहने लगे कि भगवन् यदि आप हम पर प्रसन्न हैं तो यह वर दीजिये कि आप में हमारी अटूट भक्ति और श्रद्धा हमेशा बनी रहे।

शंकर जी बोले—हे विष्णु और ब्रह्मा जी ! आप जैसा चाहते हो, वैसा ही होगा, आप नाना तरह प्रजाओं की सृष्टि करते रहो, तब भगवान शंकर जी इतना कह कर वहीं अन्तर्ध्यान हो गये। यह मैंने उन्हीं योगी पुरुष भगवान शंकर का वर्णन तुम लोगों को सुनाया है। उन्हीं भगवान शंकर जी ने इस सारे संसार की सृष्टि की है।

हम लोग तो हेतुमात्र हैं, वे भगवान शंकर अज्ञात अव्यक्त भगवान स्वरूप रहित हैं। तीनों लोक में वे शिव नाम से प्रसिद्ध हैं। वे अचिन्त्य हैं अदृश्य हैं ज्ञानी भक्त जन ही उनको देख सकते हैं। हम देवाधिदेव भगवान को नमस्कार करते हैं। हे महादेव! आपको हम नमस्कार करते हैं। हे श्रेष्ट मनोहंस! आपको बार बार प्रणाम है। आप सभी देवों में श्रेष्ठ और प्रभावशाली हैं। हे प्रभो! आपको प्रणाम है।

सूतजी बोले हे ब्राह्मणों! इस तरह की बातों को सुन कर सभी देवता लोग भगवान शंकर जी को नमस्कार करके अपने अपने स्थान पर चले गये। जो मनुष्य भगवान के इस लिंग स्रोत का पाठ करता है। वह हमेशा सुखी रह कर मन इच्छित फल प्राप्त करता है और अन्त में सभी पापों से छूट कर मोक्ष को प्राप्त करता है यह कथा मैंने आप लोगों को महेश्वर की पराक्रम प्रकट करने वाली बातें सुनाई हैं। यही बातें भगवान विष्णु और ब्रह्मा जी ने भगवान शंकर जी की कृपा से बातें की थीं॥

[इति श्री वायु महापुराण का लिङ्गोद्भवस्तव नामका पचपनवाँ अध्याय समाप्त]

छप्पनवाँ अध्याय

[पितरों का वर्णन]

शांशपायन जी बोले—हे सूत जी! प्रत्येक महिने की अमावस को इड़ा का पुत्र पुरुरवा किस भाँति से स्वर्ग को जाता था और वहाँ पितरों को तर्पण कैसे करता था? सो हमको सुनाने की कृपा करिये।

सूत जी बोले—हे शांशपायन जी! इलाके पुत्र राजा पुरुरवा के प्रभाव को आप लोगों को सुनाता हुँ। चन्द्रमा का सूर्य के साथ संयोग, जल के सार भूत चन्द्रमा का शुक्ल और कृष्ण पक्ष में ह्रास और वृद्धि, पितरों के पथ का निर्णय, चन्द्रमा से अमृत की प्राप्ति; पितरोंका तर्पण कल्पोंको वहन करने वाले अग्नि और अस्तसोम पितरों का दर्शन, इलाके पुत्र पुरुरवा के द्वारा पितरों का तर्पण किस तरह किया गया। इसका विवरण और पर्वों का वर्णन कैसे किया गया सो

सो सब आप लोगों को सुनाता हूँ।

जिस समय चन्द्रमा और सूर्य एक ही मण्डल में समान नक्षत्र पर होते हैं और एक ही रात्रि को होते हैं तब अमावस्या होती है पुरुरवा हर एक मावसको अपने नाना तथा पितामह सूर्य तथा चन्द्रमा को देखने जाया करता था, तब वहां वह उनके समय की परीक्षा करके टिका रहता था। प्रसन्न होने पर चन्द्रमा से अमृत झड़ा करता था। पुरुरवा वहां पर चन्द्रमा की उपासना करने लगता था उपासक पुरुरवा चौदश युक्त मावस और परवा सहित मावस–इनको समझता मावस और कुहू की उपासना करता था। उस समय वह सूर्य युक्त अमावस्या के एक काल की प्रतीक्षा करता हुआ वह पुरुरवा वहाँ ठहरता था। पितीश्वरों की तृप्ति के लिये एक मास तक चन्द्र से अमृत की वर्षा होती है। कृष्ण पक्ष में १५ सूर्य की किरणों के द्वारा चन्द्रमा से दुहे हुये अमृत का पान किया जाता है। राजा इस अमृत से ही विधि पूर्वक पितरों को तृपा करता था।

सौम्य, वर्हिषद, काव्य और अग्निष्वात्त, ये पितर हैं। ऋतु जिसे आग कहते हैं वह सम्वतसर माना गया है उसी से आवर्त पैदा हुये है। वे आवर्त अर्धामास नामक वर्ष के प्रसिद्ध पुत्र जो देव गण हैं वे प्रपितामह नाम से प्रसिद्ध हैं। सौम्य नामक पितृगण सौम्य से उत्पन हैं। काव्य नामक पितर, कपि यानी भृगु के पुत्र हैं। सोम से उत्पन्न होने वाले सोमपायी पितर गण उपहूत नाम से याद किये जाते हैं। आज्य (घृत) पान करने वाले पितृगण काव्य कहे गये हैं। इस तरह ये पितृ गण तृप्त होते हैं। काव्य, वर्हिषद, और अग्निष्वात तथा आर्तव पितर भी होते हैं। अष्ठकापति, काव्य पञ्चाब्द नामक पितर कहे गये हैं। इनके सम्वतसर का नाम अग्नि है। परिवत्सर सूर्य है, ईद्वत्सर चन्द्रमा है। अनुवत्सर वायु है। वत्सर रुद्र है। जो युगात्मक पाँच वर्ष कहे हैं वे लेखाऊष्पपा और दिवाकीर्त्य नामों से पुकारे जाते हैं। ये हर माह में अमावस्या को अमृत पान करते हैं। राजा पुरुरवा जब तक जीवित रहे इसी तरह पितरों को तृप्त करते

रहे इस प्रकार चन्द्रमा से निकलने वाला यह अमृत, सौम्य, सुधा और मधु नाम से प्रसिद्ध है । कृष्ण पक्ष में चन्द्रमाओं की पन्द्रह कलाओं को जो जल गयी हैं, छन्द से उत्पन्न तेसीस देव गण पान किया करते हैं । देवताओं द्वारा इस प्रकार पान किया गया चन्द्रमा अमावस्या को पन्द्रहवें भाग में स्थित रहकर गमन करता है । सुषुम्ना द्वारा बढ़ाये गये चन्द्रमा के सुधामृत को क्रमशः पितरगण अमावस्या को दो कला समय तक पान करते हैं । उस तरह चन्द्रमा देवताओं के द्वारा पान किये जाने पर क्षीण हो जाने पर सूर्य अपनी उसी सुषुम्ना नामक रश्मी से सोम पीने वाले पितृगणों को तृप्त करते हैं । सूर्य पुनः चन्द्रमा को पूर्ण करते हैं सुषुम्ना के द्वारा पूर्ण चन्द्रमा की कलाओं को पुनः देवगण पान करते हैं । ये कलायें क्षीण हो जाने पर कृष्ण और पूर्ण हो जाने पर शुक्ल कहलाता हैं । पूर्णिमा को चन्द्र मण्डल पूर्ण और श्वेत दिखाई देता है ।

अब पर्व और सन्धियों का वर्णन सुनाता हूँ । जिस प्रकार ईख में या बांस में गाठों पर पोर या पर्व होते हैं ठीक उसी प्रकार आधे मास पर होने वाली शुक्लपक्षीय और कृष्ण पक्षीय तिथियों को भी काल का पर्व कहते हैं । पूर्णमासी और अमावस्या के भेद से इनकी सन्धि और ग्रन्थि कही गई है । तृतिया आदि तिथि आधे मास की पर्व तिथि हैं, अग्न्याधान आदि समिस्यायें इसलिए इनपर्वों की सन्धियों में की जाती हैं । सायंकाल में अनुमति का दो लवकाल तथा राका का तीसरे पहर का दो लव काल सत्क्रियाओं के योग्य माना गया है इसी भांति कृष्ण पक्ष की अपराह्न काल में प्रतिपदा के दो लव काल सत्क्रियाओं के योग्य माना गया है । सायंकाल के समय यदि कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा की प्रवृत्ति होती है तो वह समय पूर्णमासी का है ।

सूर्य और चन्द्रमा आपस में युगमात्रा के अनुसार रहकर विषुवत रेखा के ऊपर सममूत्र में जब उदित होते हैं तो परस्पर दर्शन होता है उसको व्यतीपात कहते हैं । पूर्णमासी को इसी प्रकार दर्शन

होता है। सूर्य को आधार मानकर समय की संख्याओं की कल्पना की जाती है। सूर्य को आधार पर मानकर समय की विशेष संख्याओं को माना जाता है। जिस रात के संधि भाग में पूर्णिमा तिथि हो पूर्ण चन्द्रमा का प्रकाश हो उसको अनुमता पूर्णिमा कहा जाता है। क्योंकि पित्रगण देवों सहित उसका दर्शन करते हैं। पूर्णमासी को चन्द्रमा का प्रकाश अत्यन्त प्रखर होता है जिससे चन्द्रमा सबका रंजन करते हैं इस कारण कवि लोग इस रात्रि को राका कहते हैं।

जिस रात में चन्द्र सूर्य और नक्षत्र एक ही स्थान पर रहते हैं उस पन्द्रहवीं रात्रि को अमावस्या कहते हैं। जिस दिन तीसरे पहर में चंद्रमा और सूर्य पूर्णरूप से व्यक्ति की तरह एक दूसरे को देखते हैं उसे पूर्णिमा कहा जाता है। ऊपर के समान जिस अमावस्या को चंद्रमा और सूर्य एक ही स्थान में समागत होकर एक दूसरे को देखते हैं उसे दर्श कहा गया है। अमावस्या के दिन चंद् की कला का अधिक से अधिक क्षय हो जाता है। उसदिन सूर्य ही ग्रहण किया जाता है। अमावस्या के दिन ही सूर्य राहुकेतु के द्वारा ग्रास लिया जाता है। उन मान्य कलाओं के आधार पर ही विद्वानों ने तिथियों का नामकरण किया है। कोयल की 'कुहू' आवाज जितने समय में समाप्त होती है उतने ही समय वाली अमावस्या कुहू नाम वाली कहलाती है। जिस अमावस्या को क्षीण हुआ चंद्मा सिनी वाली के प्रमाण से सूर्य मण्डल में प्रवेश करता है उसे सिनी वाली नाम से कहते हैं। अनुमती, राका, सिनीवाली, और कुहू–इन सब के दोल व काल केवल कुहू मात्र माने गये हैं। सब पर्वों का पूर्वकाल समान रूप से प्रशस्त है। वषट् क्रिया के लिये भी प्रशस्त है। सूर्य और चंद्मा का व्यतीपात योग और पूर्णिमा पर संयोग समान फल देने वाले हैं। प्रतिपदा और पूर्णमाका पर्वकाल द्वि मात्रिक होता है कुहू और सिनीवाली का पर्वकाल दो लव मात्रा वाला होता है। चंद्मा के सूर्य और अग्नि मण्डल से युक्त रहने पर जो पर्व काल होता है वह कलाश्रम मात्र होता है। इस तरह रात्रि की पर्व सन्धियों में सम्पूर्ण

मण्डल वाला श्री सम्पन्न चंद्रमा पर ग्रहण लगता है। चंद्रमा में पन्द्रह कलायें होती हैं सोलह नहीं क्योंकि पूर्णिमा के दिन चंद्रमा पन्द्रह कला से ही युक्त होते हैं जो पूर्ण होते हैं। इससे पंचदशी (पूर्णिमा) में ही चंद्रमा का महाक्षय (ग्रहण) होता है।

इसके बाद मासश्राद्ध के भोग करने वाले पितरों का वर्णन कर रहा हूँ। उनकी गति कैसे होती है उनको श्राद्ध में जो दी हुई वस्तुओं की प्राप्ति कैसे होती है। मरे हुये मनुष्य के बार बार जीने मरने को कोई सिद्ध योगी तपस्वी भी नहीं जान पाते, तो फिर मैं ही अज्ञानी साधारण मनुष्य कैसे जान सकता हूं। श्राद्ध वाले पितरों को लौकिक पितर मानते हैं। सब आयोनिजा और सौम्यदेव तथा यज्ञ करने वाले पितर देवताओं के समान माने जाते हैं। देवता और मनुष्य पितरों का आदर करते हैं। जो सोम से यज्ञ करने वाले हैं वे सोमवन्त कहे जाते हैं। जो यज्ञ करने वाले होते हैं वे मनुष्य मर कर बीर्हषद पितर कहलाते हैं जो मनुष्य यज्ञ के सत्कर्मों के अनुष्ठान में रहते हैं वे दुबारा जन्म धारणकरने के समय तक तृप्त रहते हैं! उनमें जो मनुष्य हवन परायण यज्ञीधकारियों से यज्ञ करने वाले हैं वे अग्निष्वान्त कहलाते हैं जो मनुष्य श्रद्धा और भक्ति से कर्मों को करते हैं और ब्रह्मचर्य, तप यज्ञ, सन्तान की उत्पत्ति, श्रद्धा, विद्या, दान इन सात शुभ कर्मों में जीवन भर तत्पर रहते हैं वे मनुष्य मृत्युके पीछे कष्ट नहीं भोगते हैं और सोम पान करने वाले सूक्ष्म शरीर देवों और पितरों के साथ स्वर्ग को प्राप्त करते हैं तथा पितरों को संतुष्ट करते हैं। पितरों के हेतु दिये हुये अन्न दान से उनके वर्णों में पैदा हुये बन्धु बान्धव पुत्र इत्यादि द्वारा दिये गये श्राद्ध के अन्न से सोम लोक में रहने वाले पितर एक महीने तक तृप्त रहते हैं। ऐसे ही पितरों को मास श्राद्धभुक पितर कहते हैं। इन मनुष्य पितरों के अलावा और भी कई प्रकार के पितर होते हैं। अपने नीच कर्मों के अनुसार तरह तरह की योनियों में प्रवेश करते हैं, वे आश्रम धर्म से भ्रष्ट स्वधा, स्वाहा से विमुख होकर बुरी आत्मा वाले शरीर के नष्ट होने पर यमपुरी में प्रेत बन कर तरह

तरह के दुख उठाते हैं। और अपने किये हुये कर्मों पर पश्चाताप करते हैं। बहुत उम्र की आयु पाकर दुर्बल शरीर होकर तथा नग्न रह कर भूख और प्यास से व्याकुल रहकर इधर उधर भटकते रहते हैं। वह खाने पीने की इच्छा से दूसरों के दिये हुये अन्न की तलाश में तथा नदी तलाब के पास पानी की खोज में इधर उधर भटकते फिरते हैं। वे भीषण तरह के नर्क में जैसे—शाल्मील नर्क, वैतरीण नर्क, कुम्भी-पाक नरक, करम्भ बालुका नरक, असिपत्रवन नरक, शिलासपेषण नरक, इत्यादि घोर नरकों में वे गिराये जाते हैं। इस प्रकार के प्रेतात्मा वाले पितरों के कुटुम्बके मनुष्यों को चाहिये कि प्रेतात्माओं के नाम गोत्रादि का नाम लेकर अप सव्य होकर पृथ्वी पर कुशा के आसन के ऊपर उन पितरों के हेतु तीन पिण्ड दान करने चाहिये। ऐसा करने से प्रेत-स्थानों में दुख पाने वाले पितरों को शान्ति मिलती है। और जो मनुष्य अपने कर्मों के अनुसार प्रेतस्थानों में न जाकर यहीं पृथ्वी पर पशु, पक्षी, स्थावर इत्यादि पांच प्रकार की योनियों में तथा भूतों में तथा अनेक रूपों के जीवों में पैदा होते हैं उनके लिये श्राद्ध में दिया हुआ अन्न उन योनियों के ठीक आहार बनकर उनको मिलता है। पवित्र शुभ समय में विधि पूर्वक करके सत्कर्मी मनुष्य के द्वारा श्राद्ध के हेतु दिया हुआ पदार्थ किसी भी योनि में गये हुये पितरको प्राप्त हो जाता है। श्राद्ध में मन्त्र द्वारा जिस पितर के हेतु से अन्न दिया जाता है, वह अन्न उसको जरूर मिलता है। ये पितर वह्नक, उष्मपा और दिवाकीर्त्या नाम से भी पुकारे जाते हैं। पितरों का दिन मास का कृष्ण पक्ष माना जाता है तथा उनकी रात्रि मास का शुक्ल पक्ष माना जाता है इतने जो पितर देवता हैं और जितने मनुष्य पितर हैं उनकी श्रद्धा और भक्ति युक्त कर्म से और उनकी प्रसन्नता से सभी देव पितर प्रसन्न होते हैं।

इस प्रकार सोमपायी पितरों के भी पितरोंका वर्णन पुराणोंमें लिखा गया है। अतः इस तरह सूर्य, चन्द्रमा पितर और पुरुणों का समा-गम, सुधा अमृत की प्राप्ति, पितरों की तृप्ति पूर्णमासी और अमावस्या

का पुण्य काल, पितरों के स्थान इत्यादि का वर्णन मैंने तुमसे सूक्ष्म रूप में कहा है। यही सनातन सर्ग है। अपनी सुख समृद्धि चाहने वाले व्यक्तियों को इनकी श्रद्धा करनी चाहिये। इन सबका वर्णन बहुत बड़ा है मैंने इनका एक देश का वर्णन आप लोगों को बताया है। इसका अलग अलग वर्णन करना कठिन है। मैंने आप सबों को स्वायम्भुव मनु के सृष्टि तत्व का वर्णन सुनाया है। अब आप लोगों के और क्या सुनने की इच्छा है॥

[श्री वायु महापुराण का पितरों का वर्णन नाम का छप्पनवां अध्याय समाप्त हुआ]

सत्तावनवाँ अध्याय

ऋषियों ने कहा—हे सूतजी! अब आप हमको स्वायम्भुव मन्वन्तर के चार युग के स्वभाव और तत्वका वर्णन विस्तार पूर्वक बताइये। सूतजी बोले—हे श्रेष्ठ ऋषियो! मैंने पृथ्वी के वर्णन के प्रसंग में जिन चारों युगों का वर्णन किया था अब मैं विस्तार पूर्वक आपसे कहूंगा। हर एक युगों का मान संख्याओं से परिणित युग, युगधर्म, युगभेद, युगसन्धि, युगांश तथा युग सन्धान इत्यादि इन छः तरह के युगों को तत्वतः बता रहा हूं। लौकिक प्रमाण से भारतवर्ष माना गया है उसी मानव वर्ष के प्रमाण से इन चारों युगों का प्रमाण बता रहा हूं। निमेष काल, काष्ठा और मुहुर्त इत्यादि लौकिक काल के प्रमाण हैं, छोटे से अक्षर के उच्चारण में जितना समय लगता है उस समय को निमेष काल मानना चाहिये। पन्द्रह निमेष की एक काष्ठा होती है और तीस काष्ठा की एक कला होती है। तीस कला का एक मुहूर्त होता है। तीस मुहूर्त का एक दिन रात होता है। सूर्यदेव मनुष्य और देव दोनों के दिन रात का हिस्सा करते हैं। उसमें दिन तो कार्य करने के लिये रात्रि सोने के लिये बनाई है। पितरों का एक दिन रात एक महीने का होता है। मनुष्यों के तीस महीने पितरों का एक महीना है और मनुष्यों के तीन सौ साठ महीनों का पितरों का एक वर्ष होता है। मनुष्यों के वर्ष के अनुसार उसके सौ वर्ष का पितरों का तीन वर्ष और चार महीने होता है। मनुष्यों के एक वर्ष का देवताओं का एक

दिन होता है। सूर्य का उत्तरायण देवताओं का दिन होता है और जब सूर्य दक्षिणायण हो जाते हैं तो देवताओं की रात होती है। देवताओं के तीस दिन रात का देवों का एक महीना होता है। मनुष्यों के तीस वर्षों का देवों का एक मास होता है। मनुष्यों के तीन सौ साठ वर्षों का देवों का एक वर्ष होता है। मनुष्यों के तीन हजार तीस वर्षों का एक सप्तर्षिवत्सर होता है और नब्बै हजार नब्बै वर्ष का एक संवत्सर होता है। मनुष्यों के छत्तीस हजार वर्षों का देवों का एक सौ वर्ष होता है इस क्रम के अनुसार देवों का वर्ष हिसाब चलता है। मनुष्यों के तीन नियुत साठ हजार वर्षों का देवों का एक हजार वर्ष संख्याविद् होता है।

भारत वर्ष में चार युग माने गये हैं पहले सतयुग, त्रेतायुग, द्वापर युग और कलियुग इत्यादि हैं। सतयुग चार हजार वर्षों का माना गया है। उसकी सँध्या और संध्याश चार सौ वर्षों का माना है। और सभी तीनों युगों में एक एक वर्ष का अन्तर माना जाता है। बारह हजार वर्षों की संख्या का सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग और कलियुग इन चारों युग की मानी गयी है। मणु चौदह लाख चालीस हजार मनुष्य वर्ष का सतयुग माना गया है। इन चारों युगों में सतयुग का प्रमाण देवों के चार हजारवर्षों का माना है। त्रेतायुग के शुरू में ब्रह्माजी द्वारा निर्दिष्ट किये गये श्रोत और स्मृति धर्मों का प्रचार सप्त ऋषियों ने और मनु ने किया था, सातों ऋषियों ने ऋग्वेद यजुवेर्द और सामवेद से अनुमत स्त्री परिग्रह अग्नि होत्रादि श्रौत धर्म का उपदेश दिया था उस त्रेतायुग के आदिम काल में सप्त ऋषियों और मनु के सत्य,ब्रह्मचर्य ज्ञान और तपस्या के कारण वैदिक कर्म से बुद्धि व्यापार और कर्मरयता के बिना ही उन मन्त्रों की सिद्धि हुई है। द्वापर युग में आयु की कमी और बाधापूर्वक के कारण उनका विभाग किया है। कलियुग के तथा द्वापर के आदिम काल में सबसे पहले ब्रह्माजी ने अपनी तपस्या के बल से दिव्य गुण युक्त आदि अन्त विहीन ऋषियों तथा देवताओं की सृष्टि की है।

चारों युगों के समान अर्थ वाले वेदों के वाक्य समूह युगों के स्वभाव के क्रम से धर्म, प्रजा तथा अपने विविध अंगों समेत विकार को प्राप्त हो जाते हैं।

क्षत्रिय मनुष्यों का उद्योग यज्ञ माना गया है, वैश्यों का हवनीय यज्ञ माना गया है, शूद्रों का कार्य श्रेष्ठ तीनों वर्णों की सेवा रूपी यज्ञ तथा ब्राह्मणों का जप रूपी यज्ञ करना मुख्य माना है सभी वर्णों के लोगों की कल्याणमय कार्यों में प्रवृत्ति रहती थी, सभी मनुष्य वर्णाश्रम धर्म का पालन करते थे। त्रेतायुग में सभी मनुष्य आयु बुद्धि, बल, स्वरूप, आरोग्य धर्मपरायण होते थे। प्रजापति ब्रह्माजी ने सभी प्रजाओं के लिये वर्णाश्रम की व्यवस्था बना रखी थी किन्तु अज्ञानी बन कर प्रजाओं ने वर्णाश्रम धर्म का उल्लंघन करके आपस में लड़ लड़ कर एक उपद्रव खड़ा करके फिर मनु के पास सभी लोग गये, और तब स्वायम्भुवमनु ने अपनी स्त्री शतरूपा से उस पुरुष ने पहले प्रियव्रत और उत्तानपाद नामके दो पुत्रों को पैदा किया। वे दोनों पुत्र राजा होकर दण्ड की व्यवस्था करने लगे और उसी समय से मनुष्य दण्ड की व्यवस्था करने वाले पैदा होने लगे, प्रजा वर्ग का रंजन करने के कारण इन लोगों का नाम राजा पड़ा है। त्रेतायुग से ही शुक्र, हवन, यज्ञ इत्यादि की व्यवस्था बनी है। त्रेतायुग में शूरवीर दीर्घायु, महाबलवान, योग्य, दण्ड देने वाले, यज्ञ परायण, कमल के समान नेत्र वाले मनोरम, विशाल वक्षस्थल वाले थे वे सभी चक्रवर्त्ती तथा महाधनुर्धर थे। राजाओं के सभी लक्षण उनमें मौजूद थे। चक्र, रथ, मणि, स्त्री, धन, अश्व और हाथी ये सात मुख्य रत्न सभी चक्रवर्ती राजाओं के मुख्य आभूषण माने जाते हैं। चक्र, रथ, मणि, खड्ग, धनुष, निधि, केतु आदि ये सात प्राण विहीन रत्न माने जाते हैं। स्त्री, पुरोहित, सेनापति, रथाकार, मन्त्री, घोडे और गज शावक इत्यादि–ये प्राण धारी रत्न माने जाते हैं। सभी मन्वतरों में चक्रवर्ती राजा इस पृथ्वी पर भगवान विष्णु के अंश से पैदा हुये हैं। इन चक्रवर्ती राजाओं के ये चार अद्भुत रत्न हैं बल, धर्म,

सुख और धन इत्यादि ।

शांशपायनजी बोले—हे सूतजी ! त्रेतायुग के आरम्भमें यज्ञ आदि की व्यवस्था किस प्रकार हुई । जब सतयुग के साथ उसकी संध्या समाप्त होगई, और त्रेतायुग के साथ कलामात्र उसकी संधि प्रारम्भ हुई । और किस तरह सभी यज्ञीय सम्भारों को इकट्ठा करके यज्ञ का प्रचलन किया । शांशपायनजी की बात सुनकर सूतजी बोले—हे शांशपायन जी अब मैं आपको यह बताऊँगा कि त्रेतायुग के प्रारम्भिक समय में यज्ञ की प्रथा किस प्रकार प्रचलित हुई है । जब त्रेतायुग में आरम्भ में वर्षा होने के बाद सभी तरह की औषधियां पैदा हुईं, लोग घर, द्वार, आश्रम, नगर की व्यवस्था में लीन होगये, उस समय देवराज इन्द्र ने वर्णाश्रम धर्म की व्यवस्था की, उस समय अश्व-मेधयज्ञ का कार्य प्रारम्भ हुआ सभी ऋषि महर्षि वहाँ आ आकर उन सभी में इकट्ठे हो गये और मेध्य पशुओं द्वारा यज्ञ का कार्य प्रारम्भ हुआ सुनकर सभी लोग देखने के लिये आ गये । उस समय सभी पुरोहित उस निरन्तर चलने वाले यज्ञ कार्य में व्यस्त हो गये, हवनीय पशुओं का वध होने लगा, देवताओं के होता गण अग्नि में हविष की आहुति देने लगे । सभी देवता इद्रियादिक गणों की पूजा करने लगे । उस यज्ञ मण्डल में पशुओं का वध होते देखकर सभी महर्षि गण बोले हे देवराज इन्द्र हे सुरोत्तम ! तुम्हारे जैसे देवराज के यज्ञ में यह पशुओं का वध शुभ कल्याण प्रद नहीं है । इन दीन पशुओं की हिंसा करके तुम अपने धर्म का नाश कर रहे हो । यह पशु की हिंसा करना धर्म नहीं है । यदि तुम्हें यज्ञ करना है तो वेद विहित यज्ञ का अनुष्ठान करो । वेद विहित यज्ञ करना अधिक अक्षयफलदायी होता है । उन यज्ञ बीजों से तुम यज्ञ प्रारम्भ करो, जिनमें हिंसा का नाम नहीं है । सभी ऋषियों ने इन्द्र के साथ मेल करके राजा वसु से कहा—

ऋषि बोले—हे राजन् ! आप प्रतापी राजा उत्तानपाद के प्रतापी पुत्र हैं । आप हम लोगों के इस भ्रम का निवारण कीजिये । राजा ने ध्यान पूर्वक मनन करके कहाकि शास्त्रों के उपदेशों के अनुसार

यज्ञ राधन करना चाहिये शास्त्रों में लिखा है कि मेध्य पशुओं द्वारा या बीजो और फलों द्वारा यज्ञराधन करना चाहिये। यज्ञ का स्वभाव ही हिंसा करना है। हे ऋषियो! यदि उन मन्त्रादिकों के बचन सत्य हैं तो हिंसा करके यज्ञ अनुष्ठान आप लोग करें। राजा वसु की इस तरह बात सुनकर ऋषि बोले कि हे राजा तू राजा होकर भी झूठ बोल रहा है। अतः तू चुप रह और ऐसा कहने के बाद उन्होंने नीचे की तरफ बने हुये भवन की तरफ देखा और कहा कि तू अब रसातल में जा कर रह मुनियों के इस प्रकार कहने पर राजा वसु आकाश में घूमने बाले रसातल में जाकर रहने लगे। स्वायम्भुव मनु के अतिरिक्त कोई भी ज्ञानी धार्मिक मनुष्य निश्चित रूप से धर्मतत्व का निर्णय नहीं कर सकता। इसी कारण ऋषियों ने जीव हिंसा को धर्म का द्वार नहीं बनाया। इसके बाद उस अश्वमेध यज्ञ में सभी ऋषि हिंसात्मक यज्ञ के अद्भुत धर्म पथ को देख गजा वसु की कही हुई बातों का अनादर करके अपने अपने स्थानों को लौट गये। इसके बाद ऋषियों के चले जाने पर देवताओं ने यज्ञ का कार्य समाप्त किया पुराने समय में प्रियव्रत, उत्तानपाद, ध्रुव, मेंधातिथि, वसु, सुमेधा, विरजा, शंखपाद, रज, प्राचीनबर्हि, पर्जन्य और हविर्धान प्रभृति अनेक तपस्वी सिद्ध महात्मा ब्राह्मण और क्षत्रिय राजा जो महा तेजवान, प्रतापी वैभवशाली होगये हैं, उन्होंने अपने तप के प्रभाव से सिद्धि प्राप्त करके स्वर्ग में स्थान पाया है। इन्हीं सब कारणों से सभी स्थानों पर यज्ञ की अपेक्षा तपस्या विशेष फल दायी मानी है। प्रजापति ब्रह्माजी ने अपने तप के प्रभाव से ही समस्त संसार की सृष्टि की है। तप की अपेक्षा यज्ञ कभी भी श्रेष्ठ नहीं हो सकता है। इस पूरे संसार का मूल तप ही है। स्वायम्भुव मन्वन्तर में यज्ञ की प्रथा इसी प्रकार शुरू हुई थी तभी से लेकर आज तक प्रत्येक युगों में यह यज्ञ होता आरहा है।

[श्री वायु महापुराण का सत्तावनवां अध्याय समाप्त ॥]

अट्ठावनवाँ अध्याय

सूतजी बोले—अब मैं आपको द्वापर युग के स्वभाव का वर्णन सुनाऊंगा। त्रेतायुग के समाप्त होने के बाद द्वापरयुग शुरू होता है। इस द्वापरयुग के आदि काल में त्रेतायुग की जो सिद्धियां मनुष्यों को प्राप्त थीं, वह भी युग साथ ही समाप्त हो जाती हैं। द्वापर युग में उन्हीं प्रजाओं के मन में लोभ, वृत्ति, अधैर्य, युद्ध वृत्ति, ब्रह्मादि वर्णों में आपस में मतभेद, याचना, वध, नौकरी करना, दण्ड, मद, निर्बलता, दम्भ, अक्षमा इत्यादि इन सभी अवगुणों की रजोमय और तपोमय प्रवृतियां पायी जाने लगती हैं। सतयुग के आदि में धर्म नहीं था. त्रेतायुग में उसकी प्रवृति होती है। द्वापर में वह व्याकुल रहता है औरकलियूग में समाप्त हो जाता है। द्वापर युग में मनुष्यों की अल्पायु के कारण वेदव्यासों ने वेद को चार भागों में बाँटा है। इस प्रकार मैंने आपको द्वपर युग के वारे में बताया। अब कलियुग के विषय में सुनो। द्वापर युग की संध्याश समाप्त हो जाने पर कलियुम की पृवृति होती है। हिंसा असूया, झूठ भाषण, माया, तपस्वियों का संहार ये कलियुगके स्वभाव हैं। उस युगकी प्रजा काल के अनुसार इनका पालन करती है। इन बातो से कलि धर्म के कारण वेदानुमत धर्म सम्पूर्ण रूप से समाप्त हो जायगा। मन, वाणी और कर्म से अधिक प्रयत्न करने पर भी लोगों की जीविका में सन्देह बना रहता है। कलियुग में महामारी, क्षुधा, दुर्भिक्ष आदि अनावृष्टि तथा देशो में उथल पुथल सदा मची रहतीहै क्षोभ स्मृतियों का सर्वथा लोप हो जाता है। कोई गर्भ में मर जाता है तो कोई जवानी में। कलियुग में सभी लोग धर्म हीन अनाचारी, अज्ञानी, क्रोधी, अल्प बुद्धि वाले और झूँठ बोलने वाले होते हैं। सभी वर्गों के लोग कर्तव्य हीन हो जाते हैं। जीवों में अधिक क्षोम होता है वेदपाठ तथा यज्ञ का अनुष्ठान द्विजाती लोग नहीं कर सकते हैं।

राजा लोग अधिकतर शूद्र जाति के होते हैं। और पाखण्ड को बढ़ाते हैं। शूद्र ब्राह्मणों की भांति तथा ब्राह्मण शूद्रों की भांति आचरण करते हैं। चोर राजाओं पर शासन और दण्ड की व्यवस्था करते हैं, नौकर स्वामि भक्ति से रहित होते हैं स्त्रिओं अतिशय दुशील, व्रतादि न करने वाली, मदिरा मांस पसन्द करने वाली, मायाविनी होने लगती हैं। हिंसक जीवों की अधिकता तथा गौओं का ह्रास होने लगता है। साधु लोगों का सर्वथा अभाव होने लगता है। चारों आश्रम शिथिल हो जाते हैं। शूद्रों को ब्राह्मण लोग नमस्कार करने वाले हो जाते हैं। सभी लोग दूसरे की स्त्री में चित्त लगाकर अपने अपने धर्म से भृष्ट हो जायेंगे। व्यवसायी लोग कपट पूर्ण तौल से खरीददारों को ठगा करेंगे। उस युग के अन्त में स्त्रियों की अधिकता और पुरुषों की कमी होगी। लोग कच्चा मांस खाने लगेंगे। सभी लोग घोर पतित कामों के करने में शंका नहीं करेंगे और शरीर से बहुत ही कमजोर होंगे यही युगान्त का लक्षण जानना चाहिये। पूरी पृथ्वी पर कहीं भी कोई मनुष्य जीव इत्यादि नहीं रहेगा। पृथ्वी पर मनुष्यों की रक्षा करने वाले राजा लोग रक्षा करने से असहाय हो जायेंगे। दुष्ट राजा लोग दूसरों के रत्नों को तथा स्त्रियों को छीन लेंगे। बुरे दुष्ट राजा बहुत कामुक होंगे तथा विद्या बुद्धि उनकी नष्ट हो जायगी। उस युगान्त के समय के पुरुष अपने बालों को बिखेर कर धूल धारण करने वाले होंगे वे सोलह वर्ष से भी कम आयु में सन्तान उत्पत्ति करेंगे। उस समय अन्न की चोरी करने वाले तथा वस्त्रों की चोरी करने वाले चोर होंगे बुद्धि और अच्छे कर्मों के समाप्त होने पर सभी लोग अकर्मण्य हो जायेंगे। उस समय दुष्ट जीव मनुष्यों को दुखी करेंगे। सुभिक्ष आरोग्य, कल्याण, सामर्थ्य ये सभी चीजें मनुष्यों को दुर्लभ हो जायेंगी ऐसे समय में सभी भूख प्यास से व्याकुल होकर भयभीत होंगे और वहां पर उल्लुओं का समूह रहने लगेगा। सभी दुखों से दुखी होकर कलियुग के मनुष्यों की उम्र अधिक से अधिक सौ

वर्षों की होगी। शास्त्र, वेद, पुराण कहीं पर रहेंगे कहीं पर लोप हो जायेंगे। धर्म कार्य बिल्कुल नष्ट हो जायेंगे, बिना पढ़े लिखे मनुष्य गेरुआ रंग के कपड़े पहनकर वेदों का विक्रय करेंगे। उस समय ब्राह्मणलोग अपना धर्म छोड़देंगे व शूद्र लोग धर्मके पण्डित माने जायेंगे कलियुग में प्रजावर्ग स्त्री हत्या, गौहत्या, आपस में मारपीट करके एक दूसरे को वध करके जीवन यापन करेंगे। प्रजावर्ग में गर्भ हत्या का घोर पाप बहुत होता है, इन्हीं सब पापों के कारण उस युग के मनुष्यों की आयु, बल, रूप इन सबका नाश होजाता है। घोर पाप के कारण उस युग में यज्ञादि शुभ कर्मों का विलोप हो जाता है, उस कलियुग में मनुष्य थोड़े ही समय में सिद्धि प्राप्त करते हैं, उस युगान्त के उत्तम श्रेष्ठ ब्राह्मण धन्य माने जाते हैं, जो श्रुतियों और स्मृतिओं द्वारा अनुष्ठान करते हैं। त्रेतायुग में जो धर्म का फल एक वर्ष में प्राप्त होता है वही धर्म का फल द्वापर युग में एक महीने में प्राप्त होता है और कलियुग में वही धर्म का फल एक दिन में प्राप्त होता है। अब हम आपको कलियुग की संध्याश का वर्णन सुनायेंगे। अभी तक हमने आपको कलियुग के विषय में सुनाया। हर एक युगों की सिद्धियां पहले युग की सिद्धियों से कम हो जाती हैं। इसी तरह युग के प्रभाव से उसकी सिद्धियां संध्या में एक पाद रहती हैं। और संध्याश में संध्या के स्वभाव की एक पाद शेष रहती हैं। स्वायम्भुव मन्वन्तर के आदि कलियुग के संध्याश के उपस्थित होने पर बुरे मनुष्यों को दण्ड देने वाला भृगु वंशीय की मृत्यु के बाद उन्हीं वंश में पैदा हुआ। चन्द्रमा के गोत्र का प्रमति नाम को राजा विष्णु के अंश से पैदा हुआ, वह राजा पूरी पृथ्वी के चारों ओर हजारों शस्त्रधारी मनुष्यों के साथ म्लेच्छों का संहार करता है। हर एक मन्वन्तर में सप्त ऋषि युगक्षय होने तक धर्म की व्यवस्था के लिये उन प्रजाओं में विराजमान रहते हैं। अल्पशेष कलियुग के धार्मिक प्रजा से सतयुग की प्रजा की उत्पत्ति होती है। सुख, आयु, बल, रूप इत्यादि ये सभी हर एक युगों में अपने

अपने स्वभाव के अनुसार एक एक चरण कम हो जाते हैं। इन चारों युगों के एक हजार बार समाप्त हो जाने पर ब्रह्माजी का एक दिन होता है, और उतने ही बार फिर समाप्त होने पर उनकी एक रात होती है। यही सभी युगों का लक्षण जानना चाहिये। इन्हीं चारों युगों की आवृति जब इकहत्तर बार समाप्त हो जाती है तो एक मन्वन्तर होता है। ये सभी समान लक्षण वाले होते हैं इसी तरह सभी मन्वन्तरों का भी यही लक्षण जानना चाहिये। इसी प्रकार सभी युगों का अदल बदल चिट प्रवृत सनातन जानना चाहिये। नाश होना और पैदा होना इन दो विशेष स्थिति में जीव समूह बदल कर एक हालत में स्थित नहीं रह सकता। सभी युगों के मन्वन्तरों का हाल मैंने आपको सुना दिया है। अभिमानी मन्वन्तरों के स्वामी आठ प्रकार के देव, ऋषि तथा मनु गण हैं, वे सभी नाम और रूप में एक बराबर प्रयोजन सिद्धि करने वाले हैं। इसी तरह हर एक युगों में वर्णाश्रम का विभाग होता है अब मैं आपको विस्तार पूर्वक क्रमशः सभी युगों की सृष्टि और स्थिति का वर्णन सुनाऊँगा, आप सब सुनिये॥

[वायु महापुराण का स्तुति नीलकण्ठ नाम का अट्ठावनवां अध्याय समाप्त हुआ]

उनसठवाँ अध्याय

[ऋषियों के लक्षण]

सूत जी बोले—ऋषि! अब आप उनका हाल सुनिये, जोकि प्रत्येक युगों में जो प्रजा उत्पन्न होती है। राक्षस, सर्प, गन्धर्व, असुर—इन सब प्राणधारियों को यदि कोई न मारे तो ये पूरे युग तक जीवित रहते हैं। पशु, पक्षी, मनुष्य और स्थावर जीव गण अपने युग धर्म के अनुसार सभी युगों में पूरी उम्र तक जीवित रहते हैं। कलियुग में मनुष्यों की आयु अनिश्चित होती है। देवों और असुरों की ऊँचाई के नाप से मनुष्यों की ऊँचाई सात सात अंगुल कम होती है। कलियुग में देवता और असुरों की ऊँचाई एक सौ अट्ठावन अंगुल की होती है। कलियुग के मनुष्यों के

चरण से लेकर सिर तक की ऊँचाई अपने चौरासी अंगुल की होती है। देवों को प्रिय लगने वाले सुन्दर स्वरूप ये जीव तद्रूप होकर देवों के निवास स्थान में दुबारा फिर पैदा होते हैं। इनका फिर देवों द्वारा भोग होता है। स्थावर और जंगम जीवों के ठीक प्रमाण के अनुसार उन्ही के स्वरूप के अनुसार रूप रख कर ये जीवगण सुख का अनुभव करते हैं।

इसके बाद अब मैं आपको सज्जन, साधु और विद्वान पुरुषों के विषय में सुनाऊँगा। जो मनुष्य ब्रह्मवान होते हैं वे सन्त कहलाते हैं। जो मनुष्य दस प्रकार के विषयों में और आठ प्रकार के कारणों में फँस कर कभी रोते हैं कभी हँसते हैं उन मनुष्यों को जितात्मा कहते हैं। दोनों प्रकार के धर्मों का पालन करते हैं, वे मनुष्य ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैष्य लोग द्विजाती कहलाते हैं। गुरु का हित करने वाला ब्रह्मचारी व्यक्ति साधु कहलाता है। अपनी सत्य क्रियाओं में रहने वाला गृहस्थी मनुष्य भी साधु कहलाता है। जो धारण करने योग्य नहीं है और जिसके आचरण से महत्व की प्राप्ति नहीं होती, उसे अधर्म कहते हैं। जिसके आचरण से इष्ट की प्राप्ति होती है, विद्वान मनुष्य उसे धर्म कहते हैं जो मनुष्य बूढ़ा लोभरहित, आत्मनिष्ठ, जिसमें घमण्ड न हो, विद्वान विद्याधर, विनम्र, सरल हों ऐसे मनुष्योंको आचार्य कहते हैं शष्ट शब्द शिष्ट शब्द से बना है उन्हीं शिष्ट लोगों के आचारों को शिष्टाचार कहते हैं। प्रत्येक मन्वन्तर के समाप्त होने पर धार्मिक प्रकृति के मनु और सप्तऋषि प्रभृति वाले मनुष्यों की सत्तालोक में सन्तान उत्पत्ति के बीजारोपण और धर्म की मर्यादा ठीक रखने के लिये बाकी रहती है। उन्हीं को शिष्ट कहते हैं। पूर्वकाल में स्वायम्भुव मन्वन्तर में धर्म के प्रत्येक अंगों का यही लक्षण ऋषियों ने बताया। अब इसके बाद मैं आप लोगों को मन्वन्तर के विषय में बताऊँगा। प्रत्येक मन्वन्तर में सम्पूर्ण श्रुतियों का तरह तरह के रूप से विधान होता है। ऋक्, यजु, साम, देवता, स्तोत्र, विधि हवन ये सभी पहले की तरह ही बदलते बदलते रहते हैं हर एक मन्वन्तर

जिस तरह जिसि प्रकार के देवगण निवास करते हैं, उन्ही के अनुसार ब्रह्माजी चार प्रकार के स्तोतों का प्रवर्तन करते हैं। पहले मन्वन्तरों में स्थित रहने वाले तपस्वी अपनी तपस्या में लीन होकर ईश्वर की इच्छावश तारों का दर्शन से सन्तोश, भय, दुख, सुख और शोक इन पांच कारणों से सभी की उत्पत्ति हुई है। इसके बाद अब में अतीत और भविष्य के ऋषियों के ऋषित्व का लक्षण बताऊंगा ! वे ऋषिगण पांच तरह के माने जाते हैं। सभी संसार के नास हो जाने पर जब सत्य, रज, और तम इन तीनों गुणों की समान अवस्था हो जाती है तब देवों के ओमतत्व का भी कोई पता नहीं रहता, उन दोनों का एक रूप अतिदेश हो जाता है तब उस समय प्रधान तत्व में विना बुद्धि के व्यापार किये ही अपने आप ही चेतना आजाती है। ये रिषिगण पांच प्रकार के ज्ञान का अनुशीलन करते कहे जाते हैं। रिषियों की जाति पांच प्रकार की होती है। उन रिषियों के नाम ये हैं—भृग, मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलह, क्तु, मनु, दक्ष, वहिष्ठ और पुलस्य ये दस रिषिगण अति ऐश्वर्यशाली और ब्रह्माजी के मानस पुत्र माने जाते हैं। वे रिषि सृष्टि के शुरू में स्वयं ही पैदा हुए थे। अतः महान स्वयमेव उन पूरे रिषियों के रूप में बदल कर पैदा होता है। उन्हीं को महर्षि कहते हैं। अब में आपको इन एश्वर्यशाली रिषियों के पुत्रों के विषय में बताऊंगा। ये समस्त रिषिगण अपने ज्ञान बल से रिषित्व को प्राप्त करते है। रिषियों के पुत्र रिषि गर्भसे ही पैदा हुए हैं। इन रिषियोंके ये नाम हैं:-काव्य, बृहस्पति, कश्यप, उशना,उतथ्य, वामदेव, अयोज्य, औशिज, कर्दम, विश्रवा, शक्ति बाल खिल्य, धटा इत्यादि रिषि थे। इनके बाद वत्सर, नग्रहू, भारद्वाज, शरद्वान, अगस्त, दीर्घ-तामा, बाजश्रवा, सुग्राक, वेश परायण इत्यादि रिषिगण अपने सत्य के बल पर रिषित्व को प्राप्त करते हैं। रिषियो ? हे वसिष्ठ, शक्ति,पराशर इन्द्र, प्रमति, भरद्वसु, मैत्रावरुण और कुगिड़न ये सात रिषि ब्रसक्षेत्र के निवासी कहे जाते हैं। यह ब्रह्म क्षेत्र ब्रह्माजी ने परम पवित्र कुरुक्षेत्र में स्थिति किया है। ब्रह्माजी ने अपने हाथों से स्वयं इसको बनाया था

उस परम पवित्र तीर्थ में सभी देवों ऋषियों और मुनियों का बहुत बड़ा समागम हुआ था।

ऋषियों ने कहा—हे सूतजी ! हम लोगों ने वायु देवता के दर्शन किये नहीं हैं। तभी उसी समय बातचीत करते हुये ही ऋषियों को एक अणु दिखाई दिया। वह अणु एक पुर के रूप में बदल कर दिखाई पड़ने लगा, उसका वायुपुर नाम पड़ा। उस वायुपुर में अठारह हजार ब्राह्मणों के रहने के लिये स्थान बना हुआ था। ब्रह्मवादी वायु देवता ने उस स्थान पर धर्म की रक्षा के लिये तीनों देवों की आज्ञा से उन ब्राह्मणों की स्थापना की थी, उसी स्थान पर रुद्र भगवान स्थायी रूप से सभी दिशाओं में स्थित रहते हैं। जो बहुत प्राचीन समय समाप्त हो गया है उसे पुराकल्प कहते हैं। पुरा शब्द के पुरानी चिन्ह होने के कारण पुराकल्प शब्द बना है। उस पुराकल्प में घटित होने वाली घटनाऐं शुद्ध सुविस्तृत नहीं होती, सिर्फ अनिश्चित भाव से ही उनके निश्चय की मान्यता की है। जिस तरह इस वर्तमान कल्प में वर्णित हो रहा है उसी प्रकार वह प्राचीन कल्प भी है। जैसा वह कल्प था वैसा यह भी है। यह ब्राह्मणों का उपदेश है। पुराने समय में विद्वानों ने ब्राह्मणों का यही लक्षण बताया है। मन्त्र से धातु मंत्र की उत्पत्ति हुई है और ब्रह्माजी की आज्ञा का पालन करने के कारण मनुष्यों के श्री वायु महापुराण का ऋषियों का ब्राह्मण नाम पड़ा है। लक्षण नाम का उनसठवां अध्याय समाप्त हुआ।

साठवाँ अध्याय

(महास्थान तीर्थ में वेद शाखाओं का वर्णन)

ऋषि बोले—हे महामते सूतजी ! पुराने समय में वेदों का किस प्रकार विभाजन हुआ, आप हम सबको इनके विषय में सुनाइये।

सूत जी बोले— हे श्रेष्ठ ऋषियो ! स्वायम्भुव मन्वन्तर के

द्वापर युग में इसी कथा को ब्रह्माजी ने मनु को सुनाया था । वही कथा हम आप लोगों को सुना रहे हैं ।

ब्रह्माजी बोले—हे तात ! युग के बदलने पर ब्राह्मणों का तेज और वैभव कम हो जाता है, क्योंकि युग दोष के कारण सभी ब्रह्माणादि वर्णों के तेज और वैभव कम हो जाते हैं। इस तरह सतयुग की अपेक्षा लोगों के पराक्रम, तेज, वैभव बल, वाक्य-ये सभी दस हजारवें भाग में बचे रहते हैं। और अन्त में सब एक साथ नष्ट हो जाते हैं वेदों के नाश होने पर यज्ञ का भी नाश हो जाता है । इसके बाद यज्ञों का नाश होने पर देवों का भी नाश हो जाता है और जिससे सभी का नाश हो जाता है। इस युग में परम तपस्वी पराशर मुनिके पुत्र वेदव्यास व्दैपायनजीने ब्रह्माजीकी आज्ञानुसार इस वेद का हिस्सा किया ये व्दैपायन व्यास जी भगवान विष्णु के अंश माने जाते हैं। व्यासजी ने वेद का प्रचार करने के लिये अपने मुख्य चार शिष्य बनाये, जिनके नाम ये हैं—जैमिनी, सुमन्तु, वैशम्पायन और पैल थे। इनके एक पाँचवें लोमहर्षण नाम के शिष्य और थे परम तेजस्वी भगवान व्यास ने अपने शिष्य ब्राह्मण पैल को ऋग्वेद का ज्ञाता पंडित बनाया, वैशम्पायन शिष्य को यजुर्वेद का ज्ञाता बनाया, अपने तीसरे शिष्य जैमिनी को साम वेद का ज्ञाता पंडित बनाया, और अपने चौथे शिष्य ऋषिवर्य्य सुमन्तु को अथर्ववेद का ज्ञाता बनाया। इतिहास और पुराण की परिभाषा के लिये उन्होंने मुझे नियुक्त किया। ये ही ऋषिगण वेद की साखा के पृवर्तक कहे गये है। अपने ज्ञान के घमण्ड से गर्वित होकर शाकल्य वेद मित्र नाम का ब्राह्मण राजा जनक के यज्ञ में नष्ट हो गये।

शांशपायन जी बोले—हे सूतजी ! राजा जनक के अश्वमेध यज्ञ में क्यों उपद्रव हुआ, और वे मुनि किस प्रकार अपने गर्व के कारण मृत्यु को प्राप्त हुये। आप हम सबको ये बातें विस्तार पूर्वक बताइये।

सूत जी ने कहा—हे ऋषियो ! राजा जनक के अश्व मेध यज्ञ में बहुत देव, ऋषि एकत्रित हुये थे, बहुत से देशों से हजारों ऋषि मुनि यज्ञ के दर्शन करनेकी इच्छा से आ आ कर इकट्ठे हो गये। सारे जनसमूह को देख कर राजा जनक के मन में यह इच्छा हुई कि इन ब्राह्मणों में सबसे उत्तम और श्रेष्ठ कौन है ! यह बात सोच कर राजा ने एक तरकीब सोची और उन्होने एक हजार गायें, एक हजार से अधिक सोना बहुत से गाँव, कीमती रत्न और सेवकों को साथ लेकर मुनियों से कहा कि हे श्रेष्ठ पवित्र ऋषियो ! मैं आप सबों को सिर झुकाकर प्रणाम करता हूँ। आप सब लोगों में जो सर्व श्रेष्ठ हों, वे मेरे इस लाये हुये धन को स्वीकर करें। कारण कि ब्राह्मण लोग अपनी विद्या के धनी होते हैं। उनकी विद्वता का परिचय विद्या से ही होता है। राजा जनक की ऐसी बातें सुनकर सभी ब्राह्मण लोग आपस में एक दूसरे को वाद विवाद के लिये पुकारने लगे, सभी मनुष्य उस राजा जनक की धन की इच्छा करने लगे। वे सभी अपने अपने मन में सोचने लगेकि यह धन हमारा है और इसी प्रकार उन ऋषिगों में उन धन राशि के लोभ के कारण आपस में तरह तरह के उपद्रव खड़े हो गये। उसी समय परम तेजस्वी ब्रह्मज्ञानियों में श्रेष्ठ महान ऋषि याज्ञवल्क्य नाम के एक दूसरे ऋषि वहाँ आये, वे ऋषि ब्रह्माजी के अंग से समुन्नत उत्पन्न हुये थे, वे अपने शिष्यों से बोले कि अरे तुम सब इस धन को उठालो। हे वत्स तुम सब धन को उठा कर घर ले चलो, अरे यह सब हमारे ही हैं इसमें भ्रम मत करो। मैं ही सब ब्राह्मणों में श्रेष्ठ और विद्वान हूँ मेरे समान प्रवक्ता यहाँ कोई नहीं है याज्ञवल्क्य जी के ऐसे शब्द सुनकर उस यज्ञ में आये हुये सभी ऋषि वृन्द क्रोधित हो गये, फिर याज्ञवल्क्य हँसकर बोले कि हे सत्यवादी ब्राह्मणो आप हमारे ऊपर क्रुद्ध न होइये, मैं सत्य बोल रहा हूँ आप सब लोग सलाह करके निश्चिय कीजिये। इसके बाद वहाँ और अनेक तरह के उपद्रव खड़े हो गये। उस महान बाद विवद में एक तरफ सभी ऋषि समूह और दूसरी तरस सिर्फ अकेले

याज्ञवल्क्य थे। याज्ञवल्क्य जी ने सभी ऋषियों से एक एक करके प्रश्न पूछे किन्तु किसी ने भी ठीक उत्तर नहीं दिया। तब परम तेजस्वी रिषि याज्ञवल्क्य ने सभी रिषियों को हरा कर शाकल्य नामके रिषि से कहा कि क्या विचार कर रहे हो, शीघ्र बोलो चुप क्यों पड़े हो। याज्ञवल्क्य के इस प्रकार अपमान करने पर शाकल्य का मुख और नेत्र क्रोध से लाल होकर सभी ऋषियों के पास ही उन्होने कठोर शब्दों में कहा कि हे याज्ञवल्क्य ! तुम हम सभी रिषियों को हराकर सभी मूल्यवान धन लेना चाहते हो। शाकल्य के इस तरह कहने पर याज्ञवल्क्य जी ने कहा कि विद्वान पुरुषों की परीक्षा विद्या से होती है। ब्राह्मण लोग अपनी इच्छा के अनुकुल प्रश्न करते हैं। अतः मैंने भी अपनी इच्छा से तुम लोगों से प्रश्न किया है। राजा जनक का भी यही मत था कि जो पुरुष विद्या में सर्व श्रेष्ठ सिद्ध हो, वही पूज्य है। इसीलिये मैंने यह धन लिया है। तब शाकल्य मुनि ने क्रोध में आकर याज्ञवल्क्य जी से एक हजार प्रश्न किये, जिनमें कि सभी का उत्तर याज्ञवल्क्य जी ने शीघ्र ही दे दिया, तब शाकल्य को चुप होना पड़ा उन्हें चुप देख कर याज्ञवल्क्य जी बोले कि हे शाकल्य तुम मेरे एक प्रश्न का उत्तर दो, लेकिन प्रश्न के उत्तर से पहले शर्त यह है कि यदि तुम ठीक उत्तर न दे सकोगे तो तुम मर जाओगे। अति गर्वीले शाकल्य की बुद्धि में नहीं आया और वे शीघ्र ही मर गये। इस महान द्रव्य के पीछे और रिषियों और याज्ञवल्क्य जी में बहुत वाद विवाद हुआ लेकिन अन्त में सभी को हरा कर सम्पूर्ण धन राशि अपने शिष्यों के साथ अपने घर ले गये। परम बुद्धिमान, पदों के अर्थों को जानने वाले विश्वर्य्य वेदमित्र शाकल्य पाँच संहिताओं का प्रणयन किया था, उनके पाँच शिष्य थे। शाकपर्ण रथीतर ने तीन संहिताओं का प्रणयन किया उनके चार ब्राह्मण शिष्य थे। शाकल्य के मरने के बाद सभी ब्राह्मण रिषियों को ब्रह्महत्या का पाप लगा, और वे अति चिन्तित होकर ब्रह्माजी के पास गये, तब ब्रह्मा जी ने उनकी इच्छा समझ कर उन्हें पवनपुर भेज दिया और कहा कि तुम लोग

वहाँ जाओ तुम्हारे सब के पाप नष्ट हो जायेंगे। वहाँ पर बारहों सूर्य, वालुकेश्वर, ग्यारह रुद्र और वायु पुत्र को प्रणाम करके तथा चारों कुण्डों में स्नान करके तुम्हारे सब पाप नष्ट हो जायेंगे। ब्रह्मा जी की इस प्रकार बातें सुनकर सभी लोग वहाँ जाकर स्नानादि करके वायु पुत्र को प्रणाम करके सभी अपने पापों से छूट गये। उसी समय से वह वायु पुर नामक स्थान पापों को नष्ट करने वाला तीर्थ समझे जाना लगा है। उसका वायु पुर को पूर्वकाल में वायु देव ने बनवाया था। जिस समय अंजनि के गर्भ से पैदा होने वाले पवन पुत्र हनुमान उत्पन्न हुये थे, उसी समय वायु देव ने उसको बनवाया था। उस पुर में ब्रह्मणों का ही शासन अधिक है। गौ हत्या करने वाला मदिरा पीने वाला दूसरों की स्त्री को चुराने वाला इत्यादि ऐसे पापों के करने वालों के पाप उस वायुपुर नाम के तीर्थ के स्नान और प्रणाम करने से छूट जाते हैं॥

[श्री वायु महापुराण का महास्थान तीर्थ वेद शाखा प्रणयन नामका साठवाँ अध्याय समाप्त]

इकसठवाँ अध्याय

(प्रजापति के वंश का वर्णन)

ऋषि बोले—भारद्वाज, याज्ञवल्क्यर्जा, गालीक, सालीक, बुद्धिमान शतबलाक, नैगम, इत्यादि इन रिषियों ने तीन संहिताओं को बनाया था। रथीतर ने जो संहिता बनाई थी वह चौथी संहिता थी, उन रथीतर रिषि के तीन विद्वान पंडित शिष्य बने थे उन रिषियों के ये नाम थे। नन्दायनीय, पन्नगारि, प्रतापी आर्यव नाम के थे। ये तीनों शिष्य बहुत विद्वान और संहिताओं के पारगामी विद्वान पंडित थे, अतः इन्होने संहिताओं का विस्तार से वर्णन किया था।

यजुर्वेद की छियासी संहिताओं का वैशम्पायन जी ने वर्णन किया है। वैशम्पायन जी ने उन संहिताओं की शिक्षा अपने पूरे शिष्यों को दी और उन शिष्यों ने वह दीक्षा ग्रहण की। याज्ञवल्क्य

जी ने ही उन की शिक्षा ग्रहण नहीं की, फिर वे भी छियासी संहिताओं की रचना करने वाले पंडित हुये थे। सभी शिष्यों में इस तरह तीन भेद माने जाते हैं। नौं भेद से मिली संहिताओं के भी तीन मुख्य भेद माने जाते हैं। उनमें से भी उत्तर देश वालों को श्यामायनि और मध्य देश वालों को आरुणि और त्रयोदश्यादि, पूर्वी देश वालों में आलम्बि मुख्य माने जाते हैं। ये सभी संहिता के जानने वाले ब्राह्मण लोग चरक नाम से प्रसिद्ध हैं। ऋषियों ने इस प्रकार की बात सुनकर सूत जी से कहा ये ऋषि किस कारण से चरक नाम से प्रसिद्ध हुये उन्होने ऐसे कौन से पुण्य कार्य किये थे। अब आप हमको वह कथा बताइये जिस प्रकार उन अध्वर्युगणों को चरकत्व प्राप्त हुआ था।

सूतजी बोले—हे ब्राह्मणो! पुराने समय में एक बार सभी ऋषि मिल कर सुमेरु पर्वत पर जाकर सब सम्मति के लिये इकट्ठे हुये, और उन्होंने यह घोषणा की, कि जो ब्राह्मण सात रात के बीच में हमारी इस सम्मति के लिये नहीं आयगा, उसे ब्रह्म हत्या का पाप लगेगा, ऐसा सुनकर सभी ऋषि ब्राह्मण तो वहाँ आ गये लेकिन वैशम्पायन जी नहीं आये, अतः उनको ब्राह्मणों के कहे अनुसार ब्रह्म हत्या का पाप लगा, तब उन्होने अपने शिष्यों से कहा कि तुम सब मिल कर मेरे इस ब्रह्म हत्या के पाप को भोगो। आप सब लोग बताइये कि क्या मेरी यह बात सुख कर नहीं है।

याज्ञवल्क्य जी बोले—मैं इस ब्रह्म हत्या के पाप को भोगूंगा, आपके साथ ये सभी मुनि गण रहें, मैं अपनी तपस्या के द्वारा इस ब्रह्महत्या के पाप से छूट जाऊँगा। याज्ञवल्क्य जी की ऐसी वाणी सुन कर वैशम्पायन जी क्रोधित होकर बोले-तुमने जो कुछ पढ़ा है वह सब मुझ को वापस लौटा दो। वैशम्पायन जी के इस तरह कहने पर ब्रह्मणों में श्रेष्ठ ऋषि याज्ञवल्क्य ने वमन के द्वारा रुधिर से भीगे हुये सम्पूर्ण वेद को मूर्तरूप में गुरू के पास वापस कर दिया इसके बाद उन्होने ध्यान चिन्तन करके सूर्य की आराधना की, उस समय

आकश मण्डल में जितनी ऊपर सूर्य ब्रह्मरूप में स्थित थे, उतने ही ऊपर जाकर यजुर्वेद सूर्य मण्डल में आश्रय लेने लगा। उनसे सन्तुष्ट होकर मार्तण्ड सूर्य देव ने समस्त यजुर्वेद याज्ञवल्क्य जी को प्रदान कर दिया, जिन वैशम्पायन के शिष्यों ने उनके साथ ब्रह्महत्या का अनुभव किया था वे सभी चरक नाम से प्रसिद्ध हुये। जैमिनी ने अपने पुत्र सुमन्तु को सम्पूर्ण यजुर्वेद का अध्ययन कराया था, वैभवशाली सुमन्तु ने अपने पुत्र सुत्वा को उसे पढ़ाया, फिर प्रतापी सुत्वा ने अपने पुत्र सुकर्मा को यजुर्वेद की शिक्षा दी, फिर सुकर्मा ने इन हजार संहिताओं को थोड़े ही समय में अपने तेजस्वी एक हजार शिष्यों को इसकी शिक्षा दी। लेकिन अनाध्याय के दिनों में अध्ययन करने से इन्द्र ने उन सभी शिष्यों को मार डाला, जिससे सुकर्मा बहुत दुखी हुये और दुखी होकर मरने के लिये तैय्यार हो गये। इस प्रकार सुकर्मा को क्रोधित होते देख कर इन्द्र ने उन्हें फिर वरदान दिया कि तुम्हारे अग्नि के समान दो प्रतापी शिष्य होंगे। हेश्रेष्ठ ब्राह्मण! आपके वे दोनों शिष्य बहुत विद्वान होंगे। और इन एक हजार संहिताओं का ज्ञान अध्ययन उनको थोड़े ही दिन में हो जायेगा। इतना कह कर देवराज इन्द्र वहीं पर अन्तर्ध्यान हो गये। उन सुकर्मा के दोनों शिष्यों के ये नाम हैं—पौष्य जी, और हिरण्नाम कौशिका थे। पौष्यञ्जी ने अपने पाँच सौ शिष्यों को संहिताओं का अध्ययन कराया। पौष्यञ्जी के वे सभी शिष्य उदीप के नाम से प्रसिद्ध थे। राजा कौशिल्य ने भी अपने पाँच सौ प्रतापी शिष्यों को पाँच सौ संहिताओं का अध्ययन कराया। तपस्वी श्रंगपुत्र ने तीन संहिताओं का अध्ययन न किया। लांगलि और शालिहोत्र ने छः छः संहिताओं का अध्ययन किया। हिरण्यनाम ने चौबीस संहिताओं का अध्ययन किया है। शांशपायनजी संहिता को छोड़ कर सभी वेद शाखाओं में लोमहर्षण जी की शाखा ही मुख्य है। उसके बाद कश्यप की संहिता मुख्य मानी गयी है। तीसरे स्थान पर सावीर्णक की संहिता मानी गयी है ये संहिता यजुर्वेद की मानी गयी हैं। इन सब

शाखाओं के अलावा शांशपायन जी की संहिता अर्थ सम्बन्धी है। वे सब आठ हजार छः सौ ऋचायें हैं। चौदह विद्या होती हैं। मीमांसा, न्याय, धर्म शास्त्र, पुराण इन चारों को मिला कर विद्याओं की संख्या अठारह होजाती है। सबसे पहले ब्रह्मर्षि, फिर देवर्षि, फिर राजर्षि को जानना चाहिये, ये तीनों ऋषियों के उत्पत्ति करने वाले हैं। इन्हीं से सब ऋषियों की उत्पत्ति होती है। कश्यप, वशिष्ठ, भृगु अंगिरा और अत्रि इन पांचों गोत्रों में ब्रह्मवादी ऋषियों की उत्पत्ति होती है। वे रिषि ब्रह्मर्षि के नाम से प्रसिद्ध हैं। धर्म, पुलस्त्य, क्रतु, पुलह, प्रत्युष, प्रभाषहूत्यदि के पुत्रों को देवर्षि कहते हैं। धर्म के दो पुत्र हैं जिनके नाम नर और नारायण हैं। पुलह के पुत्र का नाम कर्दम रिषि है, और क्रतु के पुत्र बालखिल्य हैं। कश्यपजी के दो पुत्र हैं, पर्वत और नारदजी, प्रत्यूष के पुत्र का नाम अचल है पुलस्त्य के पुत्र का नाम कुबेर है। सतयुग इत्यादि सभी युगों में सबसे पहले पहल महर्षिगण बार-बार वर्णों और आश्रमों की व्यवस्था करते हैं। त्रेतायुग के आदि काल में फिर रिषिगण इस पृथ्वी पर निम्नरूप से वर्णाश्रम धर्म की फिर व्यवस्था करते हैं। पुत्र के उत्पन्न होने पर पिता और पिता के उत्पन्न होने पर पुत्र इस प्रकार बिना विच्छेद के वे ऋषि युगक्षीण होने तक वर्तमान रहते हैं। गृहस्थाश्रम में रहने वाले अट्ठासी हजार मुनि थे। जब सूर्यदेव उत्तरायण होते हैं उस समय जो मुनिगण पितरों का मार्ग आश्रय लेते हैं और स्त्री के साथ सम्बन्ध रखते तथा अग्निहोत्र के पूजा करने वाले होते हैं, और वे सन्तान उत्पत्ति के लिये बताये गये हैं। जो ऋषि, मुनि सूर्य देव के उत्तरायण होने पर मर कर श्मशान का सहारा लेते हैं, उन मुनियों की संख्या गिनती में अट्ठासी हजार है।

इस तरह मन्वन्तर के आदि में बची हुई प्रजाओं को जो बचे रहते हैं वे शिष्टाचार का अध्ययन करते हैं। उस समय सातों ऋषि, मनु और मनुष्य देवताओं के साथ सृष्टि शुरू करते हैं। इसके बाद त्रेतायुग के शुरू होने पर जब चारों तरफ धर्म की प्रतिष्ठा हो जाती है, तब सबसे पहले देवता फिर मनुष्य ब्रह्मचर्य व्रत द्वारा रिषियों के

ऋण से, सन्तान उत्पत्ति करके पितरों के ऋण से और यज्ञ से देवों के ऋण से मुक्त हो जाते हैं। वे मनुष्य इस तरह लाख वर्ष तक वर्णाश्रम धर्म की व्यवस्था में लगे रहते हैं।

मन्वन्तर के खत्म हो जाने पर वे सब लोग अपना-अपना स्थान छोड़कर मन्त्रों के प्रभाव से महर्लोक में चले जाते हैं। इन्द्रियों को जीतने वाले वे विकार विहीन ज्ञानी पुरुष महाप्रलय तक स्थिति रहकर मन्वन्तर का बदलना देखते हैं। इसके बाद उन सभी देवों के समाप्त हो जाने पर त्रिलोकी में सब जगत शून्य ही दिखाई पड़ता है तब उस समय वे स्वर्गवासी देव वहां आते हैं। और फिर वे देवता अपने सत्य, बल, ऐश्वर्य से उन स्थानों पर स्थिति रहते हैं। सभी मन्वन्तरों में पहले मन्वन्तर की तरह ही प्रलय काल में निश्चित परिवर्तन के साथ सृष्टि की स्थिति होती है। मन्वन्तरों के खत्म होने पर सभी देव ऋषि, मनुष्य महर्लोक में चले जाते हैं। इसके बाद महर्लोक से जन लोक को जाते हैं फिर तपोलोक को जाते हैं फिर सत्यलोक को चले जाते हैं।

वायुदेव ने जिसका वर्णन किया है, वे ऋषियों के आदर पूर्ण हैं दिव्य दृष्टि सम्पन्न धर्मात्मा मनु के जीवन का वर्णन वायुदेव ने सुनाया है। किसी-किसी जगह पर व्यास की शैली में वर्णन हो चुका है। राजर्षि, देवर्षि, देवता और सर्पों का वर्णन किया है। देवों के देव इन्द्र सातों ऋषि, पितरों, प्रजापतियों के अदलने बदलने से युक्त हैं। गोपनीय परम पवित्र, स्वर्ग को प्राप्त करने वाले पुत्रप्रद और सर्वश्रेष्ठ इस कथा को बड़े-बड़े पर्वों के समय जपना चाहिये। इसके जपने से बुरे सपनों का दीखना बन्द हो जाता है और सुख शान्ति मिलती है। इसके जपने से मनुष्य निरोग होकर दीर्घायु प्राप्त करता है। इस कथा के वर्णन में सभी देवों के चरित्रों का वर्णन है। अच्छी सन्तान की उत्पत्ति का विषय है। इस महापुराण के सुनने और पढ़ने से मनुष्यों को सब सिद्धियां प्राप्त होती हैं। मैंने आप लोगों के स्वायम्भुव मन्वन्तर का विस्तार पूर्वक वर्णन किया है।

(श्री वायु महापुराण का प्रजापति के वंश का वर्णन नाम का इक्यहत्तरवां अ० समाप्त)

बासठवाँ अध्याय

(पृथ्वी का दुहा जाना)

शाँशपायन जी बोले—हे सूत जी ! अब आप हमको मन्वन्तरों का क्रमशः और उन मन्वन्तरों में होने वाले देवताओं कावर्णन कीजिये।

सूत जी बोले—अब मैं आपको मन्वन्तरों में होने वाले देवों के विषय में तथा मन्वन्तर का क्रम पूर्वक वर्णन सुनाऊँगा, आप सब ध्यान पूर्वक सुनिये। मनुओं में सबसे पहले स्वायम्भुव मनु पैदा हुये, इसके बाद स्वारोचिष मनु होते हैं, फिर उनके बाद औत्तम मनु हुये, फिर तामस मनु पैदा हुये, तामस के बाद रैवत मनु का समय आता है रैवत मनु के बाद चाक्षुष मनु का समय आता है। ये छैओं अतीत काल के मनु माने जाते हैं। इन मनुओं के बाद आठ भविष्य काल के मनु माने गये हैं। अब में आपसे वैवस्वत मनु के वर्णन के साथ साथ इन चार मन्वन्तरों का वर्णन भी करूंगा। इसके पहले आप बीते हुये पाँच मनुओं का वर्णन सुनिये। स्वारोचिष मन्वन्तरों में तुषित तथा विद्वान पारावत नाम के दो देवगण थे, दोनों देवगण स्वारोचिष मन्वन्तर के समय के हैं। तुषित के गर्भ से समुत्पन्न स्वारोचित क्रतु के पुत्र पारावत और शिष्ट हैं। वे बारह बारह गणों के रूप में माने जाते है। स्वारोचिष मन्वन्तर में छन्दज देवगण चौबीस माने जाते हैं। ये सभी क्रतु के पुत्र हैं और अमृत के पीने वाले देवगण हैं। इनमें बारह अज के नाम से प्रसिद्ध हैं और बारह तुषित के नाम से प्रसिद्ध हैं। प्रचेता विश्वदेव, समज्ञ, विश्रुत, अरितर्छन इत्यादि बहुत से पराक्रमी पारावत के गण माने हैं। ये सभी स्वारोचिष मन्वन्तर के देवगण माने जाते थे, ये सभी चौबीस देवगण उस समय सोम का पान करते थे। इन देवों के स्वामी देवराज इन्द्र थे। स्वारोचिष मनु के वंश की वृद्धि करने वाले अनगिनत पुत्रों का पुराणों में वर्णन किया गया है। प्रत्येक मन्वन्तर के सातों ऋषि, मनु और देवगण और पितर ये चार मूल माने जाते हैं। मनु से क्षत्रिय, वैश्य, ब्राह्मण और सातों ऋषि की उत्पत्ति हुई है।

जिस तरह स्वायम्भुव मनु ने सृष्टि पैदा की है उसी प्रकार स्वारोचिष मनु ने भी सृष्टि पैदा की है। तीसरे औत्तम मनु के मन्वन्तर में पाँच देवगण माने जाते हैं। इन पांचों देवगणों में हर एक की बारह की है। ये बारह सत्य गण के नाम से पुकारे जाते हैं। यज्ञ करने वाले बारह देवगण दूसरे माने जाते हैं। ये मैंने आपसे तीसरे औत्तम मनु के मन्वन्तर का संक्षेप में वर्णन किया है। जिस तरह स्वारोचिष मनु के मन्वन्तर में सृष्टि पैदा हुई उसी तरह की सृष्टि औत्तम मनु के मन्वन्तर में भी पैदा हुई है। अब मैं आपसे चौथे तामस मनु के मन्वन्तर का वर्णन करूंगा। तामस मन्वन्तर में सत्य, हरि, स्वरूप सुधी कामके चार देवगण माने जाते थे। इनमें प्रत्येक गणों के पच्चीस देवता थे तामस मनु के मन्वन्तर में पुलस्त्य के पुत्र पैदा हुये थे। सत्य, प्राण, परम श्रेष्ट मुनि थे उनके एक सौ इन्द्रियां थी, उस समय वे ही देवगण इन्द्रिय समूह माने जाते थे। उनका प्रतापी शिवि देवता था वही देवता उस मन्वन्तर का इन्द्र माना जाता था। इसी प्रकार चौथे चारिष्ण नाम के मनु के मन्वन्तर में वशिष्ठ प्रजापति के अमृतात्मा, आभूतरज, विकुण्ठ और सुमेधा नाम के चार देवगण थे, इन चारों देवगणों की सख्या में चौदह देव गण माने जाते थे। ये कुल देवगण चारिष्ण नाम के मन्वन्तर में अमृता नाम से प्रसिद्ध होते हैं। अब पांचवे मन्वन्तर में सभी देव गणों में श्रेष्ठ विभु नाम का इन्द्र हुआ था, ये सातों ऋषि पांचवे रैवत नाम के मनु के मन्वन्तर में हुये थे, ये चारिष्णव के पुत्र कहे जाते थे। अब मैं आपसे पांचों मनु के मन्वन्तरों का वर्णन संक्षेप कर चुका हूँ।

स्वारोचिष, औत्तम, तामस और रैवत–ये चारों मनु राजा प्रिय व्रत के वंश में पैदा हुये थे। इनके बाद मैं आपसे छठे चाक्षुष मनु के मन्वन्तर का वर्णन करूंगा। आक्ष, प्रसूत, भाव्य पृथुक, लेखा ये पांचों उस मन्वन्तर के देव गण कहे जाते हैं। यह सृष्टि देवों की माताओं के नाम से प्रसिद्ध है।

ये सभी देवता प्रजापति अत्रि के पुत्र आरण्य ऋषि जी के नाती माने जाते हैं। इन पांचों देव गणों के हर एक के आठ आठ देवों की संख्या मानी जाती है। ये सभी आठ आठ, देव गण आद्य नाम से पुकारे जाते हैं। श्येनभद्र, पश्य, सुमना सुवेता, रेवत, सुप्रचेत । इत्यादिप्रसूति केपत्र माने जाते हैं और देव गण-विजय, सुजय, मन उद्यान, सुमति, सुपरि, विसात और अर्थपीतइत्यादि भाव्य के पुत्र माने जाते हैं। और ये देव गण अजिष्ट, शाक्यन, वानपृष्ठ, शांकर, विष्णु, विजय इत्यादि और देवगण पृथुक के पुत्र में ने जाते हैं।

अब मैं आपसे लेखा के पुत्रों का वर्णन करूँगा। आप सब सुनिये। मनोजव, प्रचेता, अयन, बृहस्पति, वात, ध्रुवक्षिति इत्यादि ये लेखा के पुत्र माने जाते हैं। उस छठे मन्वन्तर के देवगणों के स्वामी मनोजव इन्द्र था। भृगु गोत्रोत्पन्न, उन्नत, अंगिरा के पुत्र हीवध्मान, सुधामा, वशिष्ठ, गोत्रोत्पन्न विरज, पुलस्त्य के गोत्र के अतिप्रान, पुलह के गोत्रों से उत्पन्न सहिष्णु इत्यादि ये ऋषि चाक्षुष मन्वन्तर के सप्त ऋषि माने जाते हैं, और दूसरे महर्षि चाक्षुष मन्वतर के दसवें पुत्र माने जाते हैं। ये सभी पुत्र नावद्वेलय के नाम से पुकारे जाते हैं।

ऋषि बोले—हे सूतजी ! जो मनुष्य चाक्षुष मनु के पुत्र कश्यप ऋषि के गोत्र में पैदा हुये हैं, हमें उनके विषय में भी आप कुछ बताइये।

सूतजी बोले—हे ऋषियो ! अब मैं आपसे चाक्षुष मनु का वंश वर्णन करूँगा, आप सब सुनिये। चाक्षुष मनु के वंश में वेन राजा का एक प्रतापी पुत्र राजा पृथु हुआ था। राजा पृथु के अलावा और भी दूसरे प्रजापति गण पैदा हुये थे, उन प्रजापतियों में प्राचेतस दक्ष नाम के प्रजापति थे। अत्रि प्रजापति के उत्तानपाद नाम का पुत्र हुआ। दक्ष प्रजापति का पुत्र राजा था। स्वायम्भुव मनु ने उसे अत्रि को सौंप

दिया। धर्म के सुनीति नाम की एक धर्मज्ञा कन्या थी उस धर्मज्ञा कन्या से राजा उत्तानपाद ने ध्रुव नाम के पुत्र पैदा किये। माता सुनीति धर्मज्ञा, धर्म परायण ध्रुव की कल्याणी माता थी, वह सुन्दर हँसने वाली धर्म की लक्ष्मी नाम की पत्नी में उत्पन्न हुई थी। राजा उत्तानपाद ने अपनी रानी से ध्रुव, कीर्तिमान्, अयस्मान और वसु नामके पुत्रों को और दो सुन्दर कन्याओं को पैदा किया परम प्रतापी ध्रुव ने विपुल यश की इच्छा से दस हजार वर्षों तक घोर कठिन तपस्या निराहार रह कर जंगल में की थी। स्वायम्भुव मनु के नाती जब त्रेतायुग के प्रथम चरण में भूख, प्यास से रहित होकर योग-बल से आत्मा को स्ववश रखकर कठोर तप में लीन थे, तब ब्रह्माजी ने प्रसन्न होकर उन्हें आकाश के तारागणों में परम श्रेष्ठ स्थान दिया वह स्थान महाप्रलय तक स्थाई रहने वाला था, अस्त और उदय से रहित वह स्थान हर समय एक सा ही रहता है। ध्रुव की ऐसी परम उन्नति देख कर देवता, असुर और दानवों के आचार्य शुक्राचार्यजी ने उनकी बहुत प्रसिद्धि की, उनकी घोर तपस्या को धन्य है और उनके सत्कार्य हवनादि धन्य हैं जिनके प्रताप से सातों ऋषियों के ऊपर निश्चल पद को जिसने प्राप्त किया है। बहुत वैभवशाली भगवान सूर्यदेव भी आकाश मण्डल में ध्रुवजी का सहारा लेते हैं। भूमि ने ध्रुव के संयोग से पुष्टि और भव्य नाम के पुत्रों को पैदा किया, ऐश्वर्य शाली पुष्टि ने अपनी छाया से कहा कि तू स्त्री होजा। उस समय पुष्टि के इस प्रकार करने पर छाया शीघ्र ही सुन्दर गहनों और कपड़ों को पहन कर सब स्त्री अंगों से शोभित होकर स्त्री के रूप में बदल, गई तब उस पुष्टि ने अपनी छाया नाम की पत्नी से प्राचीन गर्भ, वृषक वृक, बृकल, और धृति नाम के पाँच पुत्रों को पैदा किया, जो सभी पुत्र निष्पाप थे। प्राचीन गर्भ ने अपनी सुवर्चा नामकी स्त्री से उदारधी नाम का पुत्र पैदा किया, वह उदारधी नाम का राजा पहले जन्म में देवराज इन्द्र के पद पर नियुक्त था।

उस परम प्रतापी राजा ने एक हजार वर्ष के बीतने पर सिर्फ एक बार भोजन करके एक मन्वन्तर तक इन्द्र के पद को प्राप्त किया था। भद्रा ने उदारधी के संयोग से दिवंजय नाम का पुत्र पैदा किया। इसके बाद वरांगी ने राजा दिवंजय के संयोग से रिपु नाम के पुत्र को पैदा किया, फिर बृहती ने रिपु के संयोग से परम प्रतापी राजा चाक्षुष को पैदा किया, उस चाक्षुष का पुत्र मनु कहलाया, वह मनु ब्राह्मण और क्षत्रियों को पैदा करने वाला हुआ। हे श्रेष्ठ ब्राह्मणो! वैशज नाम प्रजापति महात्मा अरराय की नद्वला नामकी कन्या में उस चाक्षुष मनु के संयोग से दस श्रेष्ठ पुत्रों को पैदा किया। उन दस पुत्रों में उरु सबसे बड़े थे, फिर आग्नेयी ने अपने पति उरु के संयोग से अतिशय वीर छः पुत्रों को पैदा किया उन पुत्रों में भी अंग सबसे बड़े पुत्र थे, अंग ने अपनी पत्नी सुनीथा के संयोग से राजावेन को पैदा किया, जब राजा अत्याचारी वेन के अत्याचारों से सब प्रजा में घोर असन्तोष फैल गया तब ऋषियों ने संतान की उत्पत्ति के लिये उसके दाहिने हाथ का मन्थन किया, तब उस समय वेन के हाथों के मथने पर परम प्रतापी राजा पृथु पैदा हुये। राजा वेन का पुत्र पृथु अपने असहाय तेज से जलते हुये की तरह धनुष और कवच धारण करके प्रकट हुये। उन्होंने अपने पराक्रम और तेज से सारे लोक की रक्षा की। उस समय सम्पूर्ण पृथ्वी मण्डल पर राज सूर्य यज्ञ के सभी राजओं में सबसे श्रेष्ठ और वीर पराक्रमी पृथु ही था। राजा पृथु की स्तुति करने के लिये दो सूत मागधजन उस समय वहाँ पैदा हुये। उस श्रेष्ठ राजा पृथु ने ऋषि, देवों, पितरों, यक्षों, गन्धर्वों सभी पुण्यात्मा पुरुषों, वृक्षों, पर्वतों के समूहों के साथ गौ रूपी पृथ्वी से अन्न राशियों का दोहन किया, दोहन के समय अलग-अलग पात्रों में पृथ्वी ने सभी दुहने वालों को क्षीर प्रदान किया, उस क्षीर से सम्पूर्ण लोक की रक्षा हुई।

ऋषियों नें कहा—हे सूत जी! आप हमको राजा प्रथु के जन्म का हाल विस्तार पूर्वक बताइये, और उन्होंनें प्राचीन काल में किस

प्रकार पृथ्वी का दोहन किया। देवताओं, नागों, ब्रह्मर्षियों, यक्षों, गन्धर्वों तथा अप्सराओं के साथ जिस प्रकार और जिस विधि विधान से पृथ्वी का दोहन किया, उनके जो जो पात्र हुये, उनमें कौन दुहने वाला था, उससे किस तरह का दूध हुआ और कौन कौन बछड़े हुये। इन सबका हमको विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिये इनको हमें जानने की बड़ी इच्छा है। इसके साथ ही जिस प्रकार राजा वेन का हाथ मथा गया तथा महर्षियों ने जिस कारण से क्रोध करके उसको मृत्यु का शाप दिया है। वह सभी हमको बतलाने की कृपा करिये।

सूत जी बोले— हे विप्रो! अब मैं वेन के पुत्र राजा पृथु के जन्म का वृत्तान्त कहता हूँ सो आप लोग एकाग्र और शान्त चित्त होकर सुनिये। इस पवित्र जीवन चरित्र को कभी भी किसी अपवित्र, अशिष्य। अहितकारी एवं व्रतादि से उन्मुख रहने वाले पुरुष को नहीं कहना चाहिये। ऋषियों के द्वारा कही गई यह कथा, यश को बढ़ाने वाली, आयु देने वाली, वेद सम्मत और अत्यन्त गोपनीय है। जो अनसूयक अर्थात किसी की निन्दा न करने वाला, इसे सुनाते हैं। यथा ब्राह्मणों को प्रणाम करके औरों को सुनाते हैं। उनको अपने किये हुये का शोच नहीं करना पड़ता।

वह राजा अत्रि ऋषि के समान महान शोभा वाला और सब प्रकार से धर्म का रक्षक और महान तेजस्वी था। महर्षि आत्रि के वंश में एक अंग नाम के प्रजापति थे वेन उनका ही पुत्र था। वेन कोई परम धार्मिक राजा नहीं था। वेन की माता सुनीता मृत्यु की पुत्री थी इस कारण उसमें नाना के दोषों की प्रधानता थी इससे वह क्रूर था। धर्म को पीछे रख कर अपनी कामनाओं से घिर कर वह लोभी बन गया था। उसने धर्म विरुद्ध मतों की स्थापना की है। वह अधर्मी वेद शास्त्रों का उल्लंघन करने लगा था। उसके राज में प्रजा स्वाध्याय और वशट्कार से हीन हो गई। देवता यज्ञीत द्रव्यों को भक्षण करने तथा सोमरस पीने को तरसने लगे। वेन प्रजापति के राजत्वकाल में प्रजा को यह आदेश था कि कोई भी यज्ञ नहीं कर सकता है और

न कोई हवन ही कर सकता है। यज्ञों में ब्राह्मण लोग एकमात्र मेरी पूजा करें मेरे लिये ही, मेरे सम्मान में ही यज्ञ की क्रिया करें। इस प्राचीन मर्यादा का उलंघन करके अनुचित ढंग से पूजा कराने वाले अत्याचारी वेन से मरीचि आदि ऋषियों ने जाकर कहा–हे राजा वेन हम लोग अनेक वर्षों तक आपको धर्म का उपदेश तथा दीक्षा देंगे। अतः तुम अब अधर्म करना छोड़ दो। जो तुम कार्य करते हो वह सनातन धर्म नहीं है तुमने अपने पिता की मृत्यु के बाद यह प्रतिज्ञा की थी कि "मैं प्रजा का पालन करूँगा।" यह ऋषियों की बातें सुनकर अधर्मी वेन ने हँसकर कहा–इस संसार में धर्म बनाने वाला दूसरा मेरे सिवा और कौन है? मैं किसकी बातें सुनूँ। इस जगत में पराक्रम, शास्त्र ज्ञान, तपस्या और सैन्य साधनों में मेरे समान भला इस पृथ्वी पर और कौन है? तुम लोग मुझे सर्व साधन सम्पन्न महात्मा जानो। मुझको सभी धर्मों और लोगों की उत्पत्ति करने वाला समझो। मैं अपनी इच्छा से ही इस पृथ्वी को जला दूँ या जल में डुबोदूँ। अथवा इसकी नई सृष्टि करदूँ या इसे निगल जाऊँ। इसमें जरा भी सन्देह नहीं है।

इस प्रकार उसे अनेक प्रकार समझाने बुझाने पर भी वेन ठीक रास्ते पर नहीं लाया जा सका तो उन महर्षिगों ने क्रुद्ध होकर उसको पकड़कर उसके बांये हाथ का बड़े क्रोध से मन्थन किया। हे ब्राह्मणो! मन्थन करने पर उसके बांये हाथ से एक अल्पकाम कृष्णवर्ण का चेष्टा में दीन हीन पुरुष पहिले उत्पन्न हुआ। वह अत्यन्त भयभीत और हाथ जोड़े हुए था। उसको ऐसा भयभीत देखकर ऋषियों ने कहा 'निषीद' (बैठ जाओ) इस कारण वह पुरुष निषाद वंश का कर्त्ता हुआ। उसने वेन के पापों से उत्पन्न धीवरों को पैदा किया। विन्ध्य पर्वत पर, म्लेच्छ, खस, म्लेच्छ, जाति के अधर्मी लोग उसी वेन के पाप से उत्पन्न हुए हैं। इसके बाद ऋषियों ने क्रुद्ध होकर वेन के दाहिने हाथ का बड़े वेग से मन्थन किया। तब उस हाथ के शीघ्रता से घर्षण करने पर 'पृथु' उत्पन्न हुआ। पृथु का अर्थ है 'करतल'। वह अपने शरीर की कान्ति से साक्षात् अग्नि के समान चमक रहा था सर्वप्रथम उसने तेज टंकार करने वाले 'आजगव' नामक महा धनुष को

और बाणों को प्रजा की रक्षा के लिये उठाकर अत्यन्त चमकते हुये कवच को धारण किया। उसके पैदा होने पर सभी जीव अति प्रसन्न हुये। सभी नदी तथा समुद्र गण बहुमूल्य रत्नादि और पवित्र जल लेकर उसके अभिषेक को आये। अंगगरा आदि ऋषियों के साथ ब्रह्मा जी ने आकर पृथु का अभिषेक किया इससे पृथु का प्रताप और बढ़ गया। पिता से अप्रसन्न रहने वाली प्रजा को अति प्रसन्न किया। प्रजा पर अधिक अनुराग रखने के कारण उसका नाम 'राजा' पड़ा। राज में सर्वत्र आनन्द होने लगा।

तभी पितामह के पवित्र महायज्ञ का आरम्भ हुआ। जिसमें उसी दिन सूती के गर्भ से सूत जी का जन्म हुआ। उसी महायज्ञ में परम बुद्धिमान मागध भी उत्पन्न हुये। जिस समय सामवेद का गायन हो रहा था उस समय असावधानी से विश्वदेव के स्त्रुक और पात्र में इन्द्र की हवि के साथ बृहस्पति को हवि मिल गई और देवताओं ने उस हवि को इन्द्र के लिये हवन किया इससे सूत जी की उत्पत्ति हुई। सामगाम के समय वे मागध कहलाये। इस असावधानी के कारण नीच ऊँच के पारस्परिक संयोग से पापाचरण माना गया इस कारण मागध और सूत के वर्णों में विकार आया। हीन योनि क्षत्रियों की हवि के साथ ब्राह्मण की हवि का यत संयोग हुआ इससे पूर्व जाति (ब्राह्मण) के साधर्म्य के कारण सूत उसी के (ब्राह्मणों) के समान धर्म वाले कहे गये। सूत का मध्यम धर्म क्षत्रियों के समान जीविका करना हुआ रथ, हाथियों का परिचालन और औषधि आदि निन्द्य कामों को करने लगे।

देवता और ऋषियों ने महाराजाधिराज प्रथु के लिये उन दोनों सूत मागधों को बुला कर कहा कि तुम राजा को प्रसन्न करो. इनकी स्तुति करो, इनके योग्य जो भी कार्य करने पड़े वह सब करो। यह तुम्हारी स्तुति करने के सर्वथा योग्य हैं। सूत मागध ने कहा कि हम ऐसा ही करेंगे परन्तु हमें राजा के कार्यों और लक्षण का ज्ञान नहीं है न उनके यश का हमें कुछ ज्ञान है। ऋषियों ने कहा–कि इनके द्वारा जो भविष्य काल के कार्य हैं उन्हीं का ध्यान करते हुये इनकी स्तुति करो। राजा प्रथु धार्मिक, सत्यवादी, और युद्ध में विजय प्राप्त करने वाले तथा रोजाना धर्म पूर्वक दान करने वाले हैं।

राजा पृथु ने सभी काम रीज और सदाचार पूर्वक किया था । सूत और मागधों ने राजा पृथु की स्तुति की । फिर स्तुति करने के बाद राजा पृथु ने उन दोनों सूत मागधों को मगध प्रदेश का राज्य दे दिया । उसी समय से सूत मागध राजाओं की स्तुति गान किया करते हैं और उसी समय से ये सूत मागध और बन्दीजन, अपने शुभ वचनों और आशीर्वादों से राजाओं को सुबह भोर होते ही जगाते हैं ।

सभी ऋषियों ने खुश होकर अपनी प्रजाओं से कहा कि यह पृथु तुम्हारे राजा हैं और यह तुम्हारे खाने पीने की व्यवस्था करेंगे। ऋषियों के ऐसे कहने पर सभी जनता राजा से कहने लगी कि हे राजन् ! आप हमारे खाने पीने की व्यवस्था कीजिये । प्रजा के ऐसे शब्द सुनने से राजा धनुष बाण लेकर पृथ्वी को भयभीत करने लगा तब वह भयभीता पृथ्वी गौ का रूप धारण करके ब्रह्माजी की शरण में गई, लेकिन राजा पृथु भी वहीं पर पृथ्वी के सामने धनुष बाण लेकर खड़े थे, पृथ्वी ने सामने पृथु को देखा पृथु अपने तेज से उस समत अति शोभित होकर चमचमा रहे थे । उस समय पृथ्वी ने अपने दुख से छुटकारा न पाते देखकर और देवों से भी न हारने वाले परम तपस्वी तथा अपने कर्म से न डिगने वाले राजा पृथु की शरण में आयी और वह गौ रूपी पृथ्वी ने हाथ जोड़ कर कहा कि हे राजन् ! तुम इतने तपस्वी और धर्मात्मा हो, क्या तुम्हें एक स्त्री के मारने से पाप नहीं लगेगा, और तुम मुझे मार कर किस प्रकार प्रजा का पालन करोगे, जब मैं ही नहीं रहूँगी तो अन्न धान किस प्रकार पैदा होंगे। हे राजा ! मेरे अन्दर ही समस्त लोक स्थित हैं । मैं ही पूरे संसार को धारण करती हूं। हे राजा यदि आप प्रजा की भलाई और उनका पालन करना चाहते हैं तो मेरी बात मानिये, और मुझे मत मारिये। आप अपना क्रोध दूर करिये और मैं अन्न के रूप में बदल जाऊँगी, हे राजा कीट पतंग पशु आदि तिर्यक योनि में भी स्त्री के वध करने को पाप समझते हैं आप मेरी बात मान कर अपने धर्म से नीचे न गिरिये। पृथ्वी की इस प्रकार बात सुन कर

राजा पृथु ने अपना क्रोध त्याग कर पृथ्वी से बोले कि यदि एक मनुष्य के मरने से हजारों मनुष्यों के प्राणों की रक्षा होती हो तो उसे पाप नहीं लगता है और यदि हजारों मनुष्यों के मरने से एक मनुष्य बचता है तो उसे भारी पाप लगते हैं। हे पृथ्वी ! मैं सम्पूर्ण प्रजा की भलाई के लिये तुम्हें मार रहा हूं। यदि तू मेरी बात नहीं मानेगी, तो मैं तुझको मार कर यहाँ पर अपना राज्य स्थापित करके पूरी प्रजा का धर्म पूर्वक पालन करूँगा। हे भद्रे ! तू मेरी बात मान कर प्रजाओं का पालन कर और मैं तुझको वरदान देता हूं कि तू मेरी कन्या बन जा। राजा पृथु के ऐसा कहने पर पृथ्वी ने कहा कि हे राजन् ! आप जैसा कहोगे वैसा ही मैं करूँगी। आप मुझको एक बछड़ा सौंप दीजिये मैं अपने मातृक हृदय के वात्सल्य स्नेह के कारण सभी को क्षीर प्रदान करूगी, और आप मुझको चारों तरफ से एकाकार कर दो जिससे कि ये क्षीर सभी को प्राप्त हो सकेगा। इसके बाद राजा पृथु ने भारी भारी पर्वतों को हटा कर चारों तरफ से पृथ्वी को एकाकार कर दिया। बीते हुये मन्वन्तर पृथ्वी पर न कोई नगर बसा था न कोई गाँव था, पृथ्वी कहीं पर विषम, कहीं पर सम होकर अत्यन्त दुर्गम हो रही थी उस समय न अन्न पैदा होता था न कोई व्यापार होता था। वैवस्वत मन्वन्तर में पृथ्वी पर सभी कार्य शुरू होने लगे जिस जगह पृथ्वी पर कोई नहीं था, उस जगह मनुष्य आ आ कर रहने लगे, और पृथ्वी पर सभी चीजें पैदा होने लगीं। पृथ्वी पर नष्ट होकर लुप्त होने वाली औषधियों की राजा प्रथु ने रक्षा की। इसके बाद राजा प्रथु ने चाक्षुष मनु को बछड़ा बना कर पृथ्वी को देकर अपने हाथों से अन्न राशि को पैदा किया। इस प्रकार राजा प्रथु ने गौ रूप धारिणी पृथ्वी से चाक्षुष मनु को बछड़ा बना कर पृथ्वी के पात्रों में अन्न का दोहन किया। जिससे उस सम की प्रजा की जीविका चली ऐसा भी सुना है कि फिर कभी पृथ्वी का दोहन ऋषियों ने भी किया उस समय चन्द्रमा बछड़ा थे और दोहने वाले देव गुरू वृहस्पति थे। दोहनी गायत्री आदिक छन्द बने। उन ऋषियों का क्षीर शाश्वत ब्रह्म

एवं तप था । इसके बाद इन्द्रादिक देवों ने सोने के पात्र में पृथ्वी से अमृत को दुहा । इसी अमृत से इन्द्रादिक देवता जीवित रहते हैं । नागों ने स्तुति करके विष को दुहा। उनमें जमीन को दुहने वाले वासुकि थे । उसके साथ कद्रू के सभी तेजस्वी पुत्र थे ।

इसके बाद वैष्णव नामक यक्ष को बछड़ा बनाकर यक्षों ने जमीन को कच्चे पात्र में दुहा । जिसमें वैश्रवण नामक यक्ष मुख्य था । दुहने वाला मणिवर यक्ष का पिता जतुनाम था । उसी समय जातुधान, राक्षस, पिशाच आदि ने दोहन किया । राक्षसों ने कपाल में अन्तर्धान होकर क्षीर का दोहन किया । पितरों ने चाँदी के पात्रों में जमीन का दोहन किया । उनका अमृत स्वधा हुआ । दुहने वाले अर्यमा नामक पितर और बछड़ा यमराज थे । उस स्वधा रूपी क्षीर से देवताओं की एक माह तक की तृप्ति हो जाती है । गन्धर्व एवं अप्सराओं के समूहों ने कमल के पात्र में चित्ररथ और शुचि को बछड़ा बनाकर जमीन को दुहा । उसमें मुनि का पुत्र विश्वावसु महा तेजस्वी दोहने वाले थे ।

इसके पश्चात पर्वतों ने वसुन्धरा का दोहन किया । उसमें बछड़ा हिमालय और सुमेरु थे दोहन का पात्र पर्वत ही थे और क्षीर रूप में मूर्तिमती औषधित या रत्न प्राप्त हुए । फिर वृक्ष और लताओं ने दोहन का कार्य किया । जिसमें पत्तों के पुरोहों को तोड़ने पर जो दूध निकलता है उसको प्राप्त किया । इस प्रकार सबके मनोरथों को पूर्ण करने वाली, भूतभाविनी, यशवाली वसुन्धरा को धारण करने वाली, पालन और सभी प्रकार के विधान करने वाली जमीन का दोहन राजा पृथु ने लोक कल्याण के लिये किया । यह सुना गया है । इसलिये यह जमीन सम्पूर्ण जीवों की आश्रय और उत्पन्न करने वाली है ।

॥ इति श्री वायु महापुराण का पृथ्वी दोहन नामक ६२ वाँ अध्याय समाप्त ॥

———

तिरेसठवाँ अध्याय

(पृथु वंश का वर्णन)

सूतजी बोले-यह समुद्र तक विस्तार वाली सम्पूर्ण जमीन मेदिनी नाम से विख्यात है। मेदनाम चर्बी का है। अतः चर्बी से उत्पन्न होने के कारण इसे मेदिनी कहा है। वसु अर्थात् धन या अन्न धारण करने के कारण वसुधा नाम से कही जाती है। यही जमीन पूर्वकाल में मधु और केटभ नामक दानवों की चर्बी से आकीर्ण थी। यही कारण है कि समुद्र तक फैली हुई यह जमीन मेदिनी नाम से प्रसिद्ध है। राजा प्रथु की पुत्री होने से इसे जमीन कहा जाता है। परम बुद्धिमान राजा प्रथु के द्वारा यह वसुन्धरा प्रसिद्धि को प्राप्त हुई अनेक भागों में बांटी गई और बड़े बड़े नगर समूहों से युक्त की गई। ब्राह्मण आदि चारों वर्णों के लोगों से व्याप्त की गई। इस प्रकार श्रेष्ठ राजा बेन का पुत्र प्रथु इसका प्रभावशाली सम्राट था। सभी जीव उसकी पूजा करते थे तथा नमस्कार करते थे। वह ब्रह्म से समुद्रभूत था उसका प्रभाव कभी नष्ट होने वाला नहीं था। अनेक राजा लोग उसको नमस्कार करते थे। उसका प्रभाव कभी नष्ट होने वाला नहीं था। रणभूमि में महान योद्धा लोग उसकी प्रार्थना करते थे। जो वीर पुरुष रणभूमि राजा प्रथु का नाम लेकर जाते हैं वे कल्याण के पात्र और विजयी होते हैं। वह वैश्यों के लिये भी नमस्कार के योग्य हैं क्योंकि उनको भी वे वृत्ति देते हैं।

सर्व प्रथम प्राचीनकाल में ब्रह्माजी ने जमीन का दोहन किया था। उस समय वायु को बछड़ा बनाकर बीजों का दोहन किया गया था। फिर अग्नीध्र ने मनु को बछड़ा बनाकर जमीन को दुहा। फिर स्वारोचिष मन्वन्तर में चैत्र ने मनु को बछड़ा बनाकर इसका दोहन किया। पुनः देवभुज ने भी मनु को बछड़ा बनाकर जमीन को दुहा। और अन्नों का दोहन किया। इसके बाद पांचवे तामस मन्वन्तर में भी वलवन्धु ने तामस मनु

को बछड़ा बनाकर पृथ्वी का दोहन कार्य किया। पुनः पुराण ने चरिष्णव को बछड़ा बनाकर दुग्ध इसी प्रकार चाक्षुष को, भी पुराणों ने बछड़ा बनाकर पृथ्वी को दुहा। पुनः वैवस्वत मन्वन्तर में वेन के पुत्र पृथु ने इसका दोहन किया जिसका वर्णन मैंने विस्तार से किया।

अब इस राजा पृथु की प्रजाओं के बारे में आप लोग सुनें। राजा पृथु के दो महान बलशाली पुत्रथे एक का नाम था अन्तर्धि और दूसरे का नाम था पाली। इसमें अन्तर्धि के उसकी पत्नी शिखण्डिनी से हविर्धान नामक पुत्र हुआ। आग्नेयी धिषणा ने हविर्धान के संयोग से प्राचीन बर्हिस, शुक्र, गय, कृष्ण, व्रज और अजिन नामक छै पुत्र उत्पन्न हुए। परमप्रतापी बर्हिस एक प्रजापति थे। वे अपने बालशस्त्र ज्ञान, तपस्या, पराक्रम आदि से सम्पूर्ण भूमण्डल के एक छत्र सम्राट थे। इस प्रजापति एवं सम्राट ने समुद्र-पुत्री सवर्णा से विवाह किया था। सवर्णा से उसके दस पुत्र हुए। जो सबके सब प्रचेता कहलाते थे और धनुर्वेद के पारंगत थे। उन प्रचेताओं ने दश हजार वर्ष तक समुद्र के जल में शयन कर तप किया उस समय सभी वृक्षों ने बढ़कर सब पृथ्वी को ढक लिया आकाश को छूने लगे इससे प्रजा को महान कष्ट हो रहा था। तब प्रचेताओं ने अपने मुख से वायु और अग्नि को छोड़ा जिन्होंने उन्हें सुखाकर जला डाला। इस प्रकार उन वृक्षों का नाश हो गया।

इसके बाद चन्द्रमा के द्वारा समझाने पर प्रचेताओं ने वृक्षों पर से अपना क्रोध हटा लिया तथा शेष कुछ वृक्षों को जीवित छोड़ दिया। और चन्द्रमा के कहने पर वृक्षों की कन्या मारिषा को उन्होंने धर्म पूर्वक पत्नी बनाया। सभी ने मानसिक संकल्प से मारिषा में गर्भाधान किया। दश प्रचेताओं के अंश से उसमें दक्ष नामक प्रजापति उत्पन्न हुए। जो चन्द्रमा के अंश के कारण महान तेजस्वी और पराक्रमी थे। दक्ष ने प्रथम मानसिक सृष्टि उत्पन्न की, संभोग से नहीं। उस दक्ष ने पहले अचर, चर, द्विपद (मनुष्य) और चतुष्पदों (पशु) की सृष्टि की। पुनः स्त्रियां उत्पन्न कीं। उनमें से दस धर्म को,

तेरह कश्यप को तथा सत्ताईस कन्याओं को चन्द्रमा के लिये दे दिया। चार कन्यायें अरिष्टनेमि को, दो अंगिरा को, तथा एक कृशाश्व को दी। इस बीच में छटा चाक्षुष और सातवां प्रजापति वैवस्वत मनु का भी कार्यकाल बीत गया उन दक्ष कन्याओं ने देवता, पक्षी, नाग, दैत्य, दानव, गन्धर्व, अप्सराएँ एवं अन्याय जातियों को उत्पन्न किया। इसके उपरान्त इस पृथ्वी पर प्रजायें सम्भोग के द्वारा उत्पन्न होने लगीं। इनके पहले सृष्टि संकल्प, दर्शन, एवं स्पर्श से होती थी।

ऋषियों ने पूछा—हे सूतजी! देवता, दानव तथा देवर्षियों की उत्पत्ति आपने प्रजापति महान आत्मा दक्ष से पहले कही है और दक्ष का जन्म प्राण से कहा है सो उस महा तेजस्वी दक्ष ने कैसे प्रचेताओं के पुत्र होने का गौरव प्राप्त किया—इस सन्देह को आप निवारण करने की कृपा करें तथा साथ ही आप यह बतलाने की कृपा भी करें कि वह चन्द्रमा का श्वसुर कैसे हुआ।

सूतजी बोले—हे ऋषियो! यह जन्म मरण सदा सभी जीवों में हुआ करता है। विद्वान लोग इसमें मोह को नहीं प्राप्त होते हैं। हे ब्राह्मणो! ये दक्ष आदि प्रजापति हर युग में होते रहते हैं और विनाश होते हैं। इसमें विद्वान मोह नहीं करते हैं। हे द्विजवृन्द! पूर्व समय में इनमें छोटे बड़े का भी भाव नहीं था। केवल तपस्या ही महत्वपूर्ण मानी जाती है। इनका व्यक्तिगत प्रभाव ही प्रभावशाली होता है। चाक्षुष मनु की इस चराचर सृष्टि के वृतान्त को जो व्यक्ति अच्छी तरह जानते हैं वे अपनी आयु आनन्द से बिताकर अन्त में स्वर्ग को जाते हैं। और वहाँ पूजनीय होते हैं। मैंने आपसे चाक्षुष मन्वन्तर की सृष्टि का सूक्ष्म रूप में वर्णन किया है। स्वायम्भुव मनु के अन्त तक छः मन्वन्तरों का वर्णन किया है। वैवस्वतमनु के मन्वतर की सृष्टि दूसरे मन्वन्तरों के समान ही आरोग्य, आयु, धर्म, अर्थ और काम सभी दृष्टियों से अनन्त है। जो मनुष्य किसी गुणों में दोष निकालने के भाव को छोड़कर सात्विक विचार से इसको पढ़ते और सुनते हैं। उसको सभी सुख प्राप्त होते हैं तथा आरोग्य होकर

सन्तान और धन से सुखी रहते हैं। अब आपसे वैवस्वत मनु के मन्वन्तर की सृष्टि का वर्णन विस्तार सहित करूँगा, आप सब ध्यान देकर सुनिये।

श्री वायु महापुराण का पृथु वंश वर्णन नामक तिरेसठवाँ अध्याय समाप्त

चौंसठवाँ अध्याय

(वैवस्वत मन्वन्तर की सृष्टि का वर्णन)

सूत जी बोले—हे ऋषियो ! अब हम आपसे वैवस्वत मन्वन्तर की सृष्टि का वर्णन कर रहे हैं। सातवे वैवस्वत मन्वन्तर में कश्यप ऋषि से देवता और महर्षि पैदा हुए। उसमें ये आठ देवगण प्रधान माने जाते हैं। आठों देवगणों के ये नाम हैं-आदित्य गण, वसुगण, रुद्रगण, विश्वेदेवगण, मरुदगण, भृगुपुत्र और अंगिरा के पुत्र हैं। इनमें ये तीन आदित्यगण, मरुदगण, रुद्रगण ये तीनों कश्यपजी के पुत्र माने जाते हैं। इनके बाद ये तीन गण धर्म के पुत्र माने जाते हैं। साध्यगण, वसुगण और विश्वेदेव ये तीन हैं। फिर भृगुजी के पुत्र भार्गव माने जाते हैं और अंगिरा के पुत्र अंगिरस माने जाते हैं। वैवस्वत मन्वन्तर में ये देवगण छन्दों से उत्पन्न हुए हैं। महा प्रलय तक ये लोग सृष्टि के कार्यों के साथ चलेंगे। यह शुभ वर्तमान मरीचि नन्दन कश्यप के वंशधरों का जानना चाहिये। इन सबका स्वामी इन्द्र साम्प्रत नामक महान बलशाली है। भूतकाल के भविष्यत् काल के और वर्तमान काल के मन्वंतरों के जो इन्द्रगण हैं वे सब लक्षणों में एक समान हैं वे सब तीनों कालों के स्वामी हैं। वे हजार नेत्र वाले, पुरंदर, मघवान, श्रंगी हैं तथा वज्र तथा धारण करने वाले हैं। ये सभी सौ यज्ञ पूर्ण करने वाले तथा व्यक्तिगत सैकड़ों गुणों से सम्पन्न होते हैं। तीनों लोकों में जितने भी बलशाली, गतिवाले, और निर्बल प्राणी मात्र हैं उन सबमें इन्द्र सबसे अधिक बल सम्पन्न हैं। उनका वर्णन मैं अब करूँगा सो सुनिये—

ब्राह्मणों ने तीन लोक बताये हैं-भूतभव्य, एवं भविष्य में तीन लोक हैं। भूलोक यह पृथ्वी, भुवलोक अन्तरिक्ष और भव्यलोक स्वर्ग

कहा गया है। अब मैं उनके लक्षणों को कहता हूँ।

सबसे पहले ब्रह्माजी ने सन्तान की कामना से 'भूः' इस अक्षर का उच्चारण किया। उसी समय यह भूलोक हो गया। भू धातु का सत्ता में या विद्यमानता में प्रयोग होता है। लोक दर्शन में भी उसकी प्रसिद्धि मानी गई है। विद्यमान रहने तथा लोगों के दृष्टिगोचर होने के कारण यह भूमि भूलोक कही गई है। ब्राह्मणों ने इसको प्रथम वेद माना है। इस लोक के आविर्भाव हो जाने पर ब्रह्मा ने फिर 'भवत्' ऐसा दूसरा उच्चारण किया। भवत् शब्द से वर्तमान काल में होने वाले का बोध होता है। निरुक्त के जानने वाले लोग भवत् शब्द से भुवर्लोक की निरुक्ति करते हैं। इस प्रकार अन्तरिक्ष को दूसरा 'भुवर्लोक' कहते हैं। इस भुवः लोक की उत्पत्ति हो जाने पर ब्रह्माजी ने 'भव्य' शब्द का उच्चारण किया। इससे भव्यलोक का आविर्भाव हुआ। भव्य शब्द भविष्यत् काल के अर्थ का बोधक है इसीलिये इसे भव्य लोक कहा जाने लगा। इसको दिव (स्वर्ग) लोक के नाम से स्मरण किया जाता है।

इसके बाद ब्रह्माजी ने 'स्व' शब्द का उच्चारण किया जिससे भाव्यलोक का प्रादुर्भाव हुआ। भाव्य इस धातु का भविष्यतकाल के अर्थ में प्रयोग होता है। इस प्रकार यह भूमि भूलोक, अन्तरिक्ष भुवलोक और स्वर्ग का भाव्यलोक के अर्थ में कहे गये हैं। यही तीनों लोकों के समूह हैं। इन्हीं तीनों लोकों के संयुक्त उच्चारण से तीनों भूः भुवः स्वः महाव्याहृतियाँ कही जाती हैं। धातु जानने वाले विद्वान 'नाथ' धातु को 'पालन' अर्थ में प्रयोग करते हैं। इसलिये इन्द्रगण भूतलोक, भव्यलोक और भवत् लोक इन तीन लोकों के पालन करने वाले हैं। अतः ब्राह्मण उनको भूत भव्य और भवत तीनों का नाथ कहते हैं। प्रत्येक मन्वंतर के जो यज्ञ के देवगण हैं उनमें इन्द्र प्रमुख देवगण हैं। ये इन्द्र देवताओं के स्वामी, गुरु, नाथ, राजा एवं पितर आदि सभी कुछ हैं। ये मैंने देवेन्द्रों का संक्षिप्त लक्षण बतलाया। अब सप्तर्षियों का लक्षण सुनिये।

इन सप्तर्षियों में जो इस समय स्वर्ग में हैं, उनमें बुद्धिमान कुशिक गौत्र

वाले गाधि के पुत्र विश्वामित्र महान तपस्वी हैं। भृगु गोत्रीय उसके पुत्र जमदग्नि हैं। बृहस्पति के पुत्र परम तेजस्वी भारद्वाज हैं। उतथ्य के पुत्र गौतम शरद्वान हैं। स्वयंभू ब्रह्मा जी के पुत्र भगवान अत्रि पांचवे ऋषि हैं, छटे वसुमान नामक ऋषि हैं जो वशिष्ट के पुत्र हैं सातवें कश्यप गोत्र वाले वत्सार हैं। ये श्रेष्ठ पुरुषों के पूज्य इस वैवस्वत मन्वंतर के ऋषि हैं। जो सप्ताष कहे जाते हैं। इक्ष्वाकु, नाभाग धृष्ट, शर्याति, नरिष्यन्त, नाभ, उद्विष्ट, करुष पृषध्र और वसुमान ये दस (नौ) मनु वैवस्वत मनु के पुत्र कहे गये हैं। हे द्विज गणो, मैं आपके सामने सातवें मन्वंतर का वर्णन कर चुका। इस दूसरे चरण का भी विस्तार से वर्णन कर चुका हूँ। अब आगे क्या विषय वर्णन किया जाय यह बताने का कष्ट कीजिये ।

इति श्री वायु महापुराण वैवस्वत सर्ग नामक ६४वां अध्याय समाप्त

॥ द्वितीय अनुषंग पाद समाप्त ॥

❀ अथ उपोद्घात् नामक तृतीय पाद ❀

पैंसठवाँ अध्याय

(प्रजापति के वंश का वर्णन)

ऋषि बोले—शांशपायन जो ने कहा; कि हे महायते सूतजी! आपने हमको अनुषङ्गपाद के विषय में तो बता दिया, अब आप हमको तीसरे उपोद्घात पाद के विषय में विस्तार सहित बताइये। शांशपायन जी के ऐसे शब्द सुनकर सूतजी बहुत प्रसन्न हुए और ऋषियों से कहा—

सूत जी बोले–हे ऋषियो ! अब हम आपको उपोद्घातपाद के विषय में विस्तार सहित वर्णन करेंगे, आप सब एकनिष्ठ होकर सुनिये। वैवस्वत मनु की सृष्टि का विस्तार में वर्णन करूँगा यह पहले बताया जा चुका है कि इकहत्तर बार चारों युगों के बीत जाने पर एक मन्वंतर का कार्यकाल समाप्त होता है। देवताओं, ऋषियों, दानवों, पितरों, गंधर्वों, यक्षों, राक्षसो, भूतों, मनुष्यों, पशुओं,

पक्षियों एवं स्थावरों के साथ इस वैवस्वत मन्वन्तर के सृष्टि क्रम का वर्णन और भविष्यत् काल में होने वाली कथाओं को, मैं विवस्वान को प्रणाम करके कहूँगा। पहले स्वायंभुव नामक मन्वन्तर में जो सृष्टि के कार्य चलाने वाले सात ऋषि थे। चाक्षुष मन्वंतर के बीत जाने पर जब वैवस्वत मन्वंतर प्रारम्भ होता है तो उस काल में भी वही सात ऋषि पुनः महेश्वर के शाप के कारण प्रकट हो जाते हैं। दक्षप्रजापति, भृगु आदिक महान तेजस्वी ऋषि महात्माओं का भी उस काल में प्रादुर्भाव होता है। वे ही सातों ऋषि ब्रह्मा के मानस पुत्र के रूप में उत्पन्न होते हैं। स्वयं ब्रह्मा जी उनको पुत्र रूप में नियुक्त करते हैं। इसके बाद वे सभी सप्तऋषि सन्तान पैदा करने की इच्छा से फिर सृष्टि शुरू करते हैं। मैं उन ज्ञानी धार्मिक कार्य प्रवृति रखने रिषियों की सन्तान के विषय में वर्णन करूँगा। उन रिषियों के वंश में पैदा होने वाली प्रजा से ग्रहों और नक्षत्रों से भरी यह सम्पूर्ण पृथ्वी फिर दुबारा पैदा होती है। सूतजी ऐसी सन्देहमयी वाणी सुनकर रिषियों के मनमें संदेह हुआ, और वे अपने संदेह को मिटाने के लिये सूतजी से कहने लगे—

ऋषियों ने कहा—हे सूतजी! ये सभी सप्तरिषि पहले समय में किस प्रकार पैदा हुए, और ये किस प्रकार प्रजापति ब्रह्माजी के मानस पुत्र माने गये हैं, आप हमको इन सबके विषय में विस्तार सहित बताइये। इसके बाद सूतजी ने उन रिषियों को उपयुक्त कथा के बारे में विस्तार सहित बतलाया।

सूतजी बोले—हे रिषियो! मैं आपको यह बताऊँगा, कि ये सभी रिषि किस प्रकार महादेव जी के श्राप मिलने से अपनी सिद्धिदात्री तपस्या से भंग हो गये, और ये किस प्रकार स्वायम्भुव मनवंतर में अपनी सिद्धि को प्राप्त हुए हैं। ये सभी सप्तर्षि समूह जन लोक में एक बार ही जन्म लेते हैं। वे रिषि लोग जनलोक में आकर आपस में विचार करने लगे, और एक दूसरे से कहने लगे कि चाक्षुष मन्वन्तर में वरुण देव के यज्ञ समाप्त हो जाने पर हम सभी प्रजापति

ब्रह्माजी के मानस पुत्र होंगे, और जभी हमारा कल्याण होगा। वे सभी ऋषि स्वायम्भुव मन्वन्तर में अपने सत्य व्रत के लिये उनको श्री महादेव जी का श्राप मिला था, और उस श्राप के द्वारा उन को जन लोक में जन्म लेना पड़ा था। ब्रह्माजी देवों के यज्ञ में वरुण देव का शरीर धारण करके संतान को उत्पत्ति की इच्छा से अपने वीर्य का अग्नि में हवन करके उन्होंने दुवारा ऋषि को उत्पन्न किया। भृगु अंगिरा मरीचि, पुलस्त्य, प्रलह क्रतु, अत्रि, और वशिष्ठ ये आठ ब्रह्मा जी के पुत्र हैं। वरुध के उस विशाल यज्ञ में सभी देवता सम्मिलित हुए थे। यज्ञ के सभी अंग एवं वषट्कार मूर्ति धारण करके आते थे। हजारों साम ए वं यजुर्वेद के मूर्त स्वरूप मंत्र थे। पदक्रम से विभूषित ऋ-टग्वेद भी वहाँ पर मूर्त रूप में उपस्थित था। ॐकार रूप मुख से उज्वल , यज्ञ सूक्त, ब्राह्मण और मन्त्र भाग से संयुक्त वृत से संवलित यजुर्वेद के मूर्त स्वरूप थे। विश्वावसु आदि गन्धर्वों के साथ सामवेद अपने सभी उपकरणों से संयुक्त शोभामय था। इसके अलावा लक्षण, स्वर, स्तोम, नियुक्त, स्वरों की भक्ति, आश्रम रूप वषट्कार, निग्रह, प्रग्रह आदि भी उपस्थित थे। दिशा, दीक्षि, इला, देवी सभी दिशायें, विदिशियायें, दिगपाल देवकन्यायें देवपत्रियाँ मातृकायें तथा आयु–ये सब भी स्वरूप धारण कर वरुण का रूप धारण करने वाले देव के अग्नि मुख में हवन करते समय उपस्थित रहे। उन सब स्त्रियों को देख कर स्वायंभू ब्रह्मा जी का वीर्य स्खलित हो गया। पितामह ब्रह्मा जी ने पृथ्वी पर अपने वीर्य को गिरता देख कर स्रुवा पर रख कर घी की तरह मन्त्र से विधि पूर्वक हवन कर दिया। प्रजापति ने इस प्रकार अनेक जीवों की सृष्टि की। पृथ्वी पर कुछ क्षीण तेज वाले उस वीर्य को गिर पड़ने के कारण सत्वगुण रजोगुण तथा

तपोगुण मय सृष्टि उत्पन्न हुई। ब्रह्मा जी ने जिस समय अपने वीर्य को अग्नि में हवन किया उससे उनके समय उनके कर्मज पुत्रों की उत्पति हुई। आग में वीर्य के हवन कर देने पर महाषयों का प्रादुर्भाव हुआ। सातों ऋषियों के शरीर उज्वल एवं देदीप्यमान थे उनमें बालकों के भी सभी गुण वर्तमान थे। पहलीबार अग्नि में वीर्य का हल न करने पर लपटों से कवि (भृगु) की उत्पति हुई। ब्रह्मा जी ने उनका नाम भृगु रखा क्योंकि उन्होंने प्रथमवार भृगु शब्द का उच्चारण किया था। उस ब्रह्मर्षि को देखकर महादेव जी ने कहा--हे प्रभो! पुत्र प्राप्ति की कामना से मैं दीक्षा ग्रहण कर इस यज्ञ को कर रहा था। अतः यह ब्रह्मर्षि मेरा पुत्र हो। स्वायंभू ने कहा ऐसा ही हो। तब प्रभु भृगु को शिव ने अपना पुत्र स्वीकार किया। इसी कारण भृगुवंश में उत्पन्न होने वाले वरुथ वंशीय कहे जाते हैं। भृगुशिव की सन्तान हैं।

इसके बाद पुनः दूसरी बार ब्रह्माजी ने यज्ञाग्नि में अपने वीर्य की आहुति की। अंगारों पर बीर्य पड़ने से अंगिरा ऋषि उत्पन्न हुए। उसे देखकर अग्नि ने पुत्र रूप में मांगा। अग्नि की बात का ब्रह्मा जी ने अनुमोदन किया और ऐसा ही हो, कहा। इसीलिये अंगिरा गोना वाले अग्नी गोत्र के भी कहलाते हैं। इसके बाद ब्रह्मा जी ने छैं बार अपने वीर्य को अग्नि में हवन किया। जिससे छैं ब्राह्मण उत्पन्न हुए। जिसमें पहले थे मरीचि जो अग्नि की मरीचियों से पैदा हुए। पुनः क्रतु, अत्रि, पुलस्त्य, वसुमान, वशिष्ठ ये ब्रह्मा जी के छै मानसिक पुत्र हैं। ये सभी लोक की सन्तानों की वृद्धि करने वाले हैं। इन्हींसे प्रजा की वृद्धि हुई जिससे ये प्रजापति कहलाये।

इन्हीं के द्वारा दूसरे पितर नामक ऋषिप गण भी पैदा हुये हैं । वे लोक प्रसिद्ध सात पितर गण हैं जिनके नाम हैं—मारीच, भार्गव, आंगिरस पौलस्त्य, पौलह, वशिष्ट, और आत्रेय के नाम से ये संसार में प्रसिद्ध हैं। इस प्रकार मैंने संक्षेप से पितरों का वर्णन किया। इनके राजा का नाम यम है जिनके पाप तपस्या द्वारा नष्ट हो गये हैं।

अब आप लोग अन्य प्रजापतियों के विषय में सुनिये। कर्दम, कश्यप, शेष विक्रान्त, सुश्रवा, बहुपुत्र कुमार, विवस्वान, शुचिश्रवा, प्रचेतस, आदि के विषय में सुनिये जो पूर्वकाल में प्रजापति हो गये हैं। इनमें कुशोच्चय और बालखिल्य ऋषि गण अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। जो सभी मन के समान वेग वाले, सब जगह गमन करने वाले, तथा सार्वभौम हैं। वैखानस यज्ञ की भस्म से उत्पन्न हुये हैं। उस ब्रह्मा से अति रूप वाले दो अश्विनी कुमारों का जन्म हुआ। नेत्र से उत्पन्न होने वाले निष्पाप जन्म से इन्द्रिय को स्ववश रखने वाले तथा सात्विक प्रकृति वाले ऋषि गण इस वृत्तान्त को जानते हैं। उसके कानों से अन्नान्य श्रेष्ठ प्रजापतियों की उत्पत्ति हुई। उसके रोमकूपों से अन्यान्य ऋषियों की उपत्ति हुई। उनके स्वेद तथा मल से भी कुछ प्रजापतियों की उपत्ति हुई। उसकी देह की कान्ति से रुद्र तथा आदित्य गणों का प्रादुर्भाव हुआ। अंगारों से दिव्य एवं मानुष ज्योतियों का प्राकट्य हुआ इस प्रकार से ब्रह्मा जी इस लोक सृष्टि के आदि कर्ता और मूल पुरुष हैं। वे सब मनोरथों को देने वाले कहे गये हैं। सभी ऋषियों ने उस महायज्ञ में देव गणों के साथ ब्रह्मा जी से सन्तान की अभिलाषा से प्रार्थना की। तब इन ऋषियों और देवताओं के अंश में स्थान एवं काल को निश्चय करने वाली सन्तानें हुईं।

सर्व प्रथम भृगुवंश का विस्तार से वर्णन करूँगा जो प्रथम प्रजापति हैं। इन महात्मा भृगु की दो पत्नी थीं। एक तो दिव्या थी जो हिरण्यकशिपु की कन्या थी। दूसरी परम सुन्दरी प्रलोभ की कन्या थी जिसका नाम पौलोमी था। दिव्या ने भृगुके संयोग से

असुरों के आचार्य कविपुत्र प्रसिद्ध ग्रह शुक्र को उत्पन्न किया। वे शुक्र, उशना काव्य नामों से प्रसिद्ध हैं। शुक्र की पत्नी एवं सोमपान करने वाले पितरों की कन्या 'गो' ने चार पुत्र उत्पन्न किये। वे त्वष्ट वरुत्री तथा शण्ड और अमर्क के नाम से विख्यात हैं। वरुत्री के रंजन, पृथुरश्मि और विद्वानों में श्रेष्ठ 'बृहद्गिरा' नामक पुत्र हुए। जो देवताओं के पुरोहित हैं। इनको मनु से तर्क करने पर इन्द्र ने विनिष्ठ कर दिया। यजनी या जयन्ती नामक पत्नी में शुक्र की पत्नी देवयानी उत्पन्न हुई। विरोचन की कन्या यशोधरा में त्वष्ठा के तीन शिर वाले विश्वरूप एवं उनके छोटे भाई विश्वकर्मा की जुड़वाँ उत्पत्ति हुई। भृगु के बारह पुत्र उत्पन्न हुये जो भृगुगणदेव नाम से विख्यात हैं काव्य ने देवी में उन सभी आत्मजों को पैदा किया जिनके नाम इस प्रकार हैं—भुवन, भावन, अन्य, अन्यायन, क्रतु, श्वा मूर्धा, व्यजय, व्यश्रुष, प्रसव, अज, एवं अधिपति नाम हैं।

पुलोमा की पुत्री पौलोमी ने ब्रह्मनिष्ठ जितेन्द्रिय परम प्रभाव-शाली पुत्र को उत्पन्न किया। कठोर कार्य से उनका गर्भ आठवें महिने में ही गिर गया। गिरने से (च्यवन) नामक पुत्र हुये। और प्रचेतस से चेतन हुआ। उन भृगु पुत्र च्यवन ने अपनी सुकन्या नामक धर्मपत्नी में आत्मवान् और दधीचि नामक दो पुत्रों को पैदा किया दधीचि ने सरस्वती नामक पत्नी में सारस्वत नामक पुत्र उत्पन्न किया। राजा नहुष की पुत्री रूची आत्मवान की पत्नी हुई। आत्मवान के ऋषि 'उरु' जंघा को फाड़ कर उत्पन्न हुआ। उस उरु का पुत्र 'ऋचीक' हुआ। ऋचीक मुनि की पत्नी सत्यवती में जमदग्नि ऋषि पैदा हुये, जगदग्नि के संयोग से रेणुका में इन्द्र के समान तेजस्वी, ब्रह्मबल एवं क्षात्रबल से युक्त परशुराम जी उत्पन्न हुए 'उरु' के पुत्र ऋचीक के सौ पुत्र थे जिनमें जमदग्नि सबसे बड़े थे। उन सौ पुत्रों के एक हजार पुत्र हुये। उन सभी भृगुवंशियों के वंशज परस्पर अन्य ऋषियों से वाह्य विवाहादि कार्यों में योग्य माने गये वत्स विश्व, अश्विषेण, पाण्ड, पथ्य और शौनक इन सात गोत्रों में

ये भार्गवगण बँट गये।

अब अग्नि पुत्र 'अंङ्गिरा' के वंश का हाल सुनिये। जिनके गोत्र में भारद्वाज गौतम और इषुमान नामक मुख्य देव गण हुये हैं। आंगिरस अथर्वा की मरीचि नन्दिनी सुरूपा, कर्दम पुत्री स्वराट और मनु-कन्या पथ्या ये तीन पत्नी थीं। उनकी सन्तानों का पूर्ण विवरण आपको सुनाता हूँ—सुरूपा में बृहस्पति का जन्म हुआ। स्वराट से गौतम उत्पन्न हुये और पथ्या में अवन्ध्य, वामदेव, उशिज, उतथ्य और धिष्णु पैदा हुये और संवर्त तथा विचित्त उसके मानस पुत्र हुये। उतथ्य के पुत्र शरद्वान हुये। उशिज के पुत्र दीर्घतमा तथा वामदेव के पुत्र बृहदुत्थ हुये। धिष्णु के पुत्र सुधन्वा और सुधन्वा का पुत्र ऋषय हुआ। ऋषय के रथकार नाम वाले देव गण तथा परम प्रसिद्ध ऋषि गण पुत्र रूप में उत्पन्न हुये। बृहस्पति के पुत्र यशस्वी परम विख्यात भारद्वाज हुये। संवर्त नामक जो आंगिरस के पुत्र हैं उनकी सन्तानें देवगण के रूप में कही जाती हैं जिनका विवरण इस प्रकार है-ये आंगिरस गोत्रीय देवगण सुरुपा के औरस पुत्र रूप में पैदा हुये थे। जो संख्या में दस हैं उनके नाम औरस, आयु, दनु, दक्ष, दर्भ, प्राण, हविष्मान, क्रतु, और सत्य हैं। अयस्य, उतथ्य, वामदेव, भारद्वाज, गोत्रीय शांकृतिक, गार्ग्य, कण्व, रथीतर, मुँगल, विष्णुवद्ध, हरित, वायव भारद्वाज गोत्रीय भात्त, आर्षभ और किंभय-ये पन्द्रह आंगिरा के गोत्रीय हैं जो अन्यान्य ऋषियों के गोत्रों से विवाहादि सम्बन्धों में अंगीकार किये गये हैं। अँगिरा के गोत्र में उत्पन्न होने वालों की संख्या बहुत अधिक कही जाती है।

अब मैं मरीचि-पुत्र का वंश वर्णन करूँगा- जिनके वंश में सम्पूर्ण चर अचर जगत की उत्पत्ति हुई है। सबसे पहले मरीचि ने जल की कामना की। और संतति की इच्छा से उसी के द्वारा ध्यान मग्न हुये। मरीचि के मन में यह भावना उठी कि "सभी गुणों से

सम्पन्न, संततिवान, शुभिरुचि वाले पुत्र की उत्पत्ति से लोक में प्रतिष्ठा बढ़ती है। इस प्रकार आवाहन करने पर सभी जल समूह उनके पास आये। भगवान मरीचिने उस जलराशि में निवास किया। उसमें स्थित होकर मरीचि ने परम तेजस्वी जितेन्द्रिय अरिष्टनेमि नामक पुत्र उत्पन्न किया। जो प्रजापति कहलाये। अरिष्टनेमि सूर्य के समान तेजस्वी था। उन्हीं अरिष्ट नेमि का दूसरा कश्यप था कश्यप सविता के जनक (पिता) थे। अतः इनकी महत्ता ब्रह्म के ही समान थी। सभी मन्वन्तरों में वे ब्रह्म के अंश से उत्पन्न होते हैं। दक्ष ने कन्या के लिए जब सभी प्रजाओं को अप्रसन्न कर दिया तब अरिष्टनेमि ने कश्य (मद्य) का पान किया। उसी कश्य (मद्य) के पीने के कारण उनका कश्यप नाम पड़ा। और कन्या के लिये दक्ष द्वारा कुपित उन्होंने कठोर वाक्यों का प्रयोग किया। अत कश्यप नाम से प्रसिद्ध हुये। परमेष्ठी ब्रह्मा के अनुरोध पर तथा कश्यप की प्रार्थना पर दक्ष ने अपनी कन्यायें कश्यप को सौंप दीं वे दक्ष कन्यायें ब्रह्म वादिनी और लोक मातायें थीं। इस परम पवित्र पुण्यदायी वारुण सृष्टि के वृतान्त को जानता है या धारण करता है वह पुण्यवान, परम पवित्र और परमानन्द को प्राप्त होते हैं तथा सभी पापों से मुक्त होते हैं।

इसके बाद उन ऋषियों ने रोमहर्षण सूतजी से फिर पूछा हे सूतजी! चाक्षुष मन्वन्तर की समाप्ति हो जाने पर यह वैवस्वत मन्वन्तर किस प्रकार प्रवृत्त होता है। सो बतलाइये।

सूत जी बोले—स्वायंभू ब्रह्मा ने दक्ष प्रजापति को आज्ञा दी कि प्रजाओं की सृष्टि करो तो ब्रह्मा की इस आज्ञा पर दक्ष प्रजापति ने चर अचर सभी प्रकार के जीव समूहों की सृष्टि की। उस समय वे जरायुज अण्डज उद्भिज और स्वेदज चारों प्रकार की प्रजाओं की सृष्टि के लिये प्रवृत्त हुए दस हजार वर्ष तक घोर तप करके अणिमा आदि सिद्धियों तथा योगबल से सम्पन्न होकर उन्होंने

अपने शरीर को मनुष्य, सर्प, राक्षस, देव, असुर, गन्धर्व, प्रभृति दिव्य प्रजाओं और सम्पत्ति ऐश्वर्य और तेज में अपने ही समान ऐश्वर्य सम्पन्न, विभूतियों के रूप में विभाजित किया। इस तरह खुश होकर उन्होंने अन्य प्रजाओं की सृष्टि की इच्छा से अनेक तरह के सृष्टि में जीव जन्तुओं को, मनुष्यों, गन्धर्वों, राक्षसों, यक्षों, पिशाचों पशुओं को और मृगादिकों को अपने मानसिक संकल्पों के द्वारा पैदा किये। लेकिन जब मानसिक संकल्प के द्वारा भी सृष्टि की वृद्धि नहीं हुई, तब श्री महादेव जी के कटु वचन कहने पर इन्होंने सम्भोग कर्म के द्वारा तरह २ की सृष्टि पैदा करने का विचार किया, और फिर इन्होंने वीरण नाम के प्रजापति की लड़की असिन्की को अपनी पत्नि के रूप में ग्रहण किया। इनकी पत्नि असिन्की अपने कठिन तप के कारण समस्त लोक का पालन करने वाली हुई और सम्पूर्ण संसार को अपने ऊपर धारण करने वाली हुई। प्रजापति वीरण की पुत्री असिन्की के साथ व्याह करते समय दक्ष ने दस लाख बहने वाले कुओं को बनवाया। वे कुऐ आगे चलकर नदी और पर्वतों में मिल गये। दक्ष को इस तरह ऐश्वर्य सम्पन्न देख कर सभी ऋषियों ने कहा कि ये राजा दक्ष सम्पूर्ण प्रजा की सृष्टि करने वाले होंगे, इस तरह राजा दक्ष की पहली सृष्टि सन्तान के रूप में बदल गई और दूसरी सृष्टि प्रजा के रूप में बदल गई, और इस तरह दस लाख कुओं को बनवाकर प्रजापति दक्ष ने वीरण की पुत्री असिन्की के साथ विवाह किया। उस तेजस्वी प्रजापति दक्ष ने उस असिन्की से एक हजार पुत्रों को पैदा किया प्रजाओं की वृद्धि की इच्छा रखने वाले दक्ष के पुत्रों से ब्रह्मा जी के पुत्र नारद जी ने उनके नाश के लिये और अपने श्राप के लिये उनसे कलह प्रिय बातें कीं। जिस तरह नारद जी कश्यप जी के पुत्र कहे जाते हैं, उनका असली कारण यही है नारद जी के दक्ष पुत्रों से कलह पूर्ण बातें करने के कारण ही नारद जी को दक्ष के श्राप से भयभीत होकर कश्यप के पुत्र के रूप में जन्म लेना पड़ा। इसके बाद दक्ष के श्राप के कारण वे कश्यप जी के मानस

पुत्र के रूप में पैदा हुये। नारद जी का कश्यप जी के यहाँ मानस पुत्र के रूप में जन्म लेना, उनका दूसरा जन्म माना जाता है। ब्रह्मर्षि नारद जी सबसे पहले ब्रह्मा जी के पुत्र के रूप में पैदा हुये। प्राचीन काल में दक्ष प्रजापति के हर्यश्व नामके सभी पुत्रों का बुराई के कारण मार डाला था। जब दक्ष ने अपने सभी पुत्रों को मरते देखा, तो वे नारद जी को भी मारने के लिये तैयार हो गये, तब प्रजापति ब्रह्मा जी अपने साथ सभी ब्रह्मर्षियों को साथ लेकर दक्ष से माफी माँगने आये, तब उस समय दक्ष ने ब्रह्मा जी से कहा कि मैंने जो आपको कन्या दी है, उस कन्या से नारद जी पुत्र रूप में पैदा होंगे। तब दक्ष ने अपनी कन्या परमेष्ठी ब्रह्मा जी को दी, जिसके गर्भ से डरे हुये नारद जी शान्त रूप में पैदा हुये। ऐसी सन्देह मयी वाणी सुन कर सभी ऋषियों को आश्चर्य हुआ, और उन्होंने परम विद्वान सूत जी से पूछा—

ऋषियों ने पूछा—हे सूत जी! नारद जी ने दक्ष के हर्यश्व नाम के पुत्रों को किस कारण से मार डाला, ऋषियों के इस तरह पूछने पर महामते सूत जी ने कहा कि ऋषियो—

दक्ष प्रजापति के हर्यश्व नाम के एक हजार पुत्रों को नारद जी ने अपने पास आते देखकर कहा—हे दक्ष प्रजापति के मूर्ख पुत्रो! तुम सब भूगोल के तत्व को नहीं जानते हो कि इस पृथ्वीके ऊपर नीचे क्या है। इसका अन्त कहां होता है तुम इन सब बातों को न जानते हुये किस तरह प्रजाओं की सृष्टि करोगे, तुम बिना जाने यदि सृष्टि कार्य करोगे तो अधिक और थोड़ी के कारण पाप के भागी बनोगे। तुम बिना जाने कर ही क्या सकते हो। नारद जी की ऐसी बात सुन कर सभी दक्ष के पुत्र चारों दिशाओं में जाकर और वायु मण्डल को प्राप्त करके शिथिल और अदृश्य हो गये, और वे सभी दक्ष पुत्र वायु मण्डल में जाकर वायु के साथ घूमते घूमते वहीं खत्म हो गये और आज तक नहीं लौटे अतः इस प्रकार नारद जी की कटुपूर्ण बातों में आकर वे सभी दक्षपुत्र वायु के साथ घूमते रहते हैं।

प्रजापति दक्ष ने अपने सभी पुत्रों को खत्म होते देखकर प्राचेतस दक्ष ने वैरिणी में एक हजार पुत्रों को पैदा किया, दक्ष के उन एक हजार पुत्रों ने प्रजा की वृद्धि की इच्छा रखने वालोंसे भी नारद जी ने वही पुरानी बात कही, और उन पुत्रों ने नारदजी की बातों को सुना और आपस में सलाह करने लगे कि बात तो ठीक है। हम सबको भी अपने बड़े भाइयों की राह पर ही चलना चाहिये, बिना पृथ्वी का प्रमाण इत्यादि जानकर सृष्टि करना ठीक नहीं है अतः वे भी चारों दिशाओं की तरफ चले गये और आज तक नही लौटे। विद्वान मनुष्यों का कथन है कि बड़े भाई की खोज के लिये छोटा भी भाई यदि जाता है तो वह भी नष्ट हो जाता है। अपने शवलाश्व नाम के सभी दूसरे पुत्रों के नष्ट हो जाने पर दक्ष प्रजापति ने नारद जी को श्राप दे दिया, कि तू भी मृत्यु को प्राप्त होगा और फिर दोबारा गर्भ में रहने का कष्ट अनुभव करेगा। उन वैरिणी के सभी पुत्रों के मर जाने के बाद दक्ष ने फिर वैरिणी से साठ प्रसिद्ध कन्याओं को पैदा किया, और दक्ष प्रजापति ने अपनी उन साठ कन्याओं का विवाह विधि पूर्वक, कश्यप, धर्म, चन्द्रमा तथा और अनेक ऋषियों के साथ कर दिया। जो मनुष्य ध्यान पूर्वक मन से इस दक्ष की सृष्टि कम की कथा को सत्य रूप से पढ़ता और सुनता है, वह कभी दुखी नहीं रहता है, अतः वह हमेशा दीर्घायु, धन धान्य से समृद्ध पुत्र पौत्रों से सुखी रहता है।

श्री वायु महापुराण का प्रजापति वंश का वर्णन नाम का
पैंसठवां अध्याय समाप्त

छियासठवाँ अध्याय

(कश्यप के सन्तानों की सृष्टि कथा)

ऋषि बोले—हे सूतजी ! अब आप हमको वैवस्वत के होने वाले देवता, दानव और दैत्यों की सृष्टि के विषय में बतलाइये।

सूतजी बोले–हे ऋषियो ! मैं आपको धर्म की प्रजा की सृष्टिके विषय

में वर्णन करूँगा,आप सब मन लगाकर सुनिये। धर्मकी दस पत्नियां थीं, अरुन्धती, वसु, यामी लम्बा भानु, मरुत्वती, सकल्पा, मुहुर्त्ता साध्या, और धर्मा इत्यादि थी। प्राचेतस दक्ष ने अपनी इन दस कन्याओं का विवाह धर्म के साथ किया था। धर्म ने साध्या के संयोग से बारह पुत्रों को पैदा किया वे सभी पुत्र साध्यगणों के नाम से प्रसिद्ध हुए। वे सभी साध्यगण छन्दों से उत्पन्न होने वाले और यज्ञ में भाग पाने वाले कहे जाते हैं ब्रह्मा जी ने सन्तान उत्पन्न करने की इच्छा रख कर अपने मुँह में से जय नामके देवगणों को पैदा किया। वे जय नाम के सभी देवगण मन्वन्तर में मंत्रमय शरीर वाले कहे जाते हैं। दश, पौणमास, वृहत, रथन्तर, चिति, विचिति, आकूति, कृति, विज्ञाता, विज्ञान, मन और यज्ञ ये सभी जय नाम के देवगणों के नाम हैं। वे जय नाम के देवगण ब्रह्माजी के शाप के कारण स्वायम्भुव ये मन्वन्तर जित नाम से पैदा होते हैं। स्वारोचिष मन्वन्तर में वे तुषित नाम से उत्पन्न होते हैं और उत्तम मन्वन्तर में सत्य नाम से पैदा होते हैं। तापस मन्वन्तर में वे हरि नाम से उत्पन्न होते हैं। वे रैवत मन्वन्तर में वैकुण्ठ नाम से पैदा होते हैं, चाक्षुष मन्वन्तर में वे छन्दोज देवगण साध्य नाम से पैदा होते हैं। स्वरोचिष मन्वन्तर में तुषित नाम के होने वाले देवगण ही फिर दुबारा चाक्षुष मन्वन्तर में स्वयंभू के पुत्र धर्म के यहां बारह पुत्रों के रूप में पैदा हुए। स्वारोचिष मन्वन्तर में नर, नारायण भी दुबारा जन्म धारण करते हैं। उनमें विपश्चित से इन्द्र और सत्य से हरि नाम से प्रसिद्ध हैं। दोनों मन्तन्तरों में दोनों तुषित नाम के देवगणों में शामिल थे। उन तुषित नाम के देवगण ही साध्यगण नाम से प्रसिद्ध हुये, उनके नाम इस प्रकार हैं। मन, अनुमन्ता, आण, नर, यान, हय, नय, हंस, नारायण प्रभव, और विभु इत्यादि ये बाहर देवगण साध्य नाम से पैदा हुए थे। और स्वारोचिष मन्वन्तर में वे ही देवगण तुषित नाम से प्रसिद्ध होते हैं उनके नाम भी इस प्रकार हैं। प्राण, अपान, उदान, समान, व्यान, चक्षु, श्रोत्र, रसना, घ्राण, स्पर्श, बुद्धि और मन हैं

पूर्व काल में उन तुषितों के नाम भी इस तरह के हैं। प्राण, अपान, उदान, समान और व्यान ही था। धर्म ने वसु के संयोग से वसु गणों को उत्पन्न किया। वे गण साध्यों के भाई के रूप में पैदा हुये। इन आठ वसु गणों के नाम भी इस प्रकार हैं। धर, ध्रुव, सोम, आप, अनल, अनिल, प्रत्यूष, और प्रभास हैं। धर के द्रविण नाम के पुत्र पैदा हुये, और हुत हव्यवाह नाम के भी पुत्र धर के पैदा हुये ध्रुव के भव नामका पुत्र पैदा हुआ, वह भव नाम का पुत्र सम्पूर्ण लोक के संहार करने वाला हुआ, सोम के वर्चा और बुध नाम के दो पुत्र पैदा हुये। बुध फिर नवग्रहों में बदल गये। सोम के सर्व प्रसिद्ध दोनों पुत्र उनकी रोहिणी नामकी स्त्री के गर्भ से पैदा हुये। चन्द्रमा के तीन पुत्र और भी पैदा हुये, उन तीनों पुत्रों के ये नाम हैं, धारा उर्मि, कलिल इत्यादि। अग्नि के कुमार नाम के पुत्र का जन्म सरपतों के समूह में हुआ, उनका दूसरा नाम स्कन्द था ये स्कन्द और सनतकुमार अग्नि के चतुर्थांश तेज से पैदा हुये। इनके शाख विशाख और नैगमेय नाम के छोटे भाई भी पैदा हुये थे। अनिल ने अपनी स्त्री शिवा के संयोग से मनोजव और अविज्ञात गति नाम के दो पुत्रों को पैदा किया। प्रत्यूष के देवल नामका पुत्र पैदा हुआ। देवलके क्षमावान और मनीषी नामके दो पुत्र पैदा हुए। बृहस्पतिजी की बहन ब्रह्मचारिणी वरस्त्री थी, वह वरस्त्री बिना किसी आशक्ति सम्पूर्ण संसार में घूमती थी। वह वरस्त्री आठवें वसु प्रभास की स्त्री हुई और उनके विश्वकर्मा नामका सम्पूर्ण शिल्पियों का प्रजापति नामका पुत्र पैदा हुआ वह विश्वकर्मा नामका सम्पूर्ण शिल्प कला का कलाकार और देवताओं का बढ़ई था। विश्वकर्मा सभी देवों के विमानों को स्वय बनाता था। धर्म के विश्वा नामकी पत्नी से दस पुत्र पैदा हुए। वे सभी पुत्र विश्वेदेव के नाम से प्रसिद्ध हुए उन दसों विश्वेदेव के ये नाम हैं। —क्रतु, दक्ष, सत्य, काल, काम धुनि कुरुवान, प्रभवान और रोचमान हैं। ये शुभ कर्म करने वाले देवगण धर्म की विश्वा पत्नी से पैदा हुये। मरुत्वती से मरुद्गण

नाम के पुत्र पैदा हुए और भानु ने मानुगण नाम के पुत्रों को पैदा किया और मुहूर्ता ने मुहूर्त नाम के पुत्रों को पैदा किया, जम्बा ने घोष नाम का एक पुत्र पैदा किया। संकल्पा संकल्प नाम के पुत्रों को पैदा किया। यामी से सम्पूर्ण नाग पैदा हुए और अरुन्धती से अनेक तरह के जीव गण पैदा हुए।

हे ऋषियो! अब तक मैंने आपसे धर्म की सृष्टि का वर्णन किया है। इसके बाद अब मैं आपसे सभी प्रकार के मुहूर्तों का, शुभ व्रतों की विधि का वर्णन और उनके स्वामियों का नाम सहित विस्तार पूर्वक वर्णन करूँगा, आप सब ध्यान पूर्वक सुनिये। उसी के विषय में मैं आपसे दिन रात का विभाग होना, सभी नक्षत्रों का, उनकी गति का तथा दिन रात में आने वाले मुहूर्त का वर्णन करूँगा। एक दिन और रात के भीतर छःसौ कलाएँ होती हैं। सूर्य की गति के आधार पर ऋतुएँ बनती हैं, और उन्हीं ऋतुओं में सभी प्रकार के मुहूर्त स्थित हैं। वेदों के तत्वों के जानने वाले उन्हीं मुहूर्तों और पर्वों के आधार पर तिथियों और नक्षत्रों को बनाते हैं। तथा तिथि इत्यादि के भेद के अनुसार भिन्न भिन्न समय में पितृदान किये जाते हैं। रौद्र, सार्प, मैत्र, पिण्डय, वासव, आप्य, वैश्वदेव, ब्राह्म मध्यान्ह, प्राजापत्य, ऐन्द्र, इन्द्र, निर्ऋति, वारुण, आर्यम्ण एवं भाग ये दिवस काल पर आश्रित रहने वाले मुहूर्त हैं। ये सूर्य के द्वारा निर्मित हैं। शंकु (कील) आदि गाढ़ कर उसकी छाया से इसका प्रमाण देखा जाता है। अज, अहि, बुध्न, पूषा, यम देवता, आग्नेय, प्राजापत्य, ब्राह्म, सौम्य, आदित्य, बार्हस्पत्य, वैष्णव, सावित्र त्वाष्ट्र और वायव्य ये पन्द्रह क्रम से एक रात में रहने वाले मुहूर्त हैं। चन्द्रमा की गति से इनका उदय एवं इनके अंशों का ज्ञान होता है। ये मुहूर्त समय के एक विशेष मापक हैं तथा देवता के रूप में स्वीकृत किये जाते हैं।

सभी ग्रहों के उत्तर मध्य और दक्षिण नामक तीन स्थान हैं।

मध्य मार्ग में जारद्भव नाम का स्थान है। उत्तर में रोरावत और दक्षिण ने वैश्वानर नामक स्थान है। अश्विनी, भरिणी, कृत्तिका ये तीन नागवीथी के नाम से कही गई हैं। पुनर्वसु, पुष्य तथा श्लेषा ये ऐरावती बीथी हैं। हस्त, चित्रा, स्वांती, की गोवीथी कही गई हैं। विशाखा ज्येष्ठा, और अनुराधा की जारदुगली बीथी कहलाती हैं। इन तीन बीथियों का मध्यम मार्ग है। मूल, पूर्वाषाढ़ और उत्तराषाढ़ को अजबीथी कहा गथा है। इनका मध्यम मार्ग है। श्रवण, धनिष्ठा और शतभिष की गार्गी वीथि है। पूर्वभाद्रपद, उत्तर भाद्रपद, और रेवती की वैश्वानरी बीथी कही है। विद्वानों ने इन तीनों का दक्षिण मार्ग कहा है। ये सताईस दक्ष की कन्यायें थी जिनको दक्ष ने चन्द्रमा को सौंप दिया था। ये सभी नक्षत्र नाम वाली हैं तथा ज्योतिष में अति प्रसिद्ध नाम वाली हैं। इनमें उत्पन्न तेज वाली दक्ष कन्यायें उत्पन्न हुईं। उन सत्ताईस के अलावा १४ शेष दक्ष कन्याओं को कश्यप ऋषि ने स्वीकार किया था। ये सबकी सब लोक माता थीं। इनके नाम इस प्रकार हैं–अदिति, दिति, दनु, कला, अरिष्ठा, सुरसा, सुरभि, विनता, ताम्रा, क्रोधवशा इरा, कद्रू और मुनि। अब इनकी सन्तानों का विवरण सुनिये–चरिश्रवण मन्वन्तर के वैकुण्ठ नामक देवगण चाक्षुष मन्वन्तर में साध्य नाम से विख्यात हुये। वैवस्वत मन्वन्तर में देवगण अदिति द्वारा अति आराधित हुये जिससे एकत्र होकर उन्होंने आपस में यह परामर्श किया कि वैवस्वत मन्वन्तर में हम लोग योगाभ्यास बल से इस अदिति के गर्भ में अपने तेजो बल से प्रवेश कर पुत्र रूप रूप में उत्पन्त होंगे इस तरह तै करके वे देवगण पुनः चाक्षुष मन्वन्तर में मरीचि पुत्र कश्यप के संयोग से बाहर आदित्य गणों के रूप में पैदा हुये। इन्द्र और विष्णु ये दो श्रेष्ठ देव इस वैवस्वत मन्वन्तर में नर नारायण के रूप में उत्पन्न हुये। इस प्रकार इन देवताओं का

भी जन्म मरण होता है। जैसे इस लोक में सूर्य का उदय और अस्त होता है उसी प्रकार ब्रह्मा विष्णु और शंकर का भी आविर्भाव और तिरोभाव होता है। विषयों में अनुराग रखना ही जन्म का कारण माना है। स्वायम्भू मन्वन्तर में ब्रह्माजी के श्राप से जय नाम के देवगण जित नाम से पैदा हुए। स्वारोचिष मन्वन्तर में वे ही तुषित और उत्तम मन्वन्तर में सत्य नाम से पैदा होते हैं। तामस मन्वन्तर में हरि नाम से उत्पन्न होते हैं। चाक्षुष मन्वन्तर में वे ही वैकुण्ठ नाम से उत्पन्न होते हैं। इसके बाद चाक्षुष मन्वन्तर में वे ही साध्य नाम से पैदा हुए और इस वर्तमान वैवस्वत मन्वन्तर में अदित्य नाम से उत्पन्न हुए। धाता, अर्यमा, मित्र, वरुण, अंश, भग, इन्द्र, विवस्वान् पूषा, पर्जन्य, त्वष्टा, और विष्णुजी। इन सब में भगवान विष्णु सबसे छोटे हैं और सबसे छोटे होते हुये भी सर्व श्रेष्ठ माने जाते हैं। ये बारह आदित्यगण कश्यप जी के पुत्र माने जाते हैं। अपनी घोर परम तपस्या से सती सुरभी ने श्री महादेव जी को प्रसन्न करके कश्यप के संयोग से ग्यारह रुद्रों को पैदा किया। उन के नाम इस प्रकार हैं। अङ्गारक, सर्प, निऋति, सदस्पति, अजैकपात्, अहिबुध्न, उर्ध्वकेतु, ज्वर, भुवन, ईश्वर, मृत्यु और कपाल हैं। त्रिलोकी में इन परम ऐश्वर्यशाली रुद्रों को सती सुरभी ने कठिन तपस्या करके पैदा किया, सती सुरभी ने दो कन्याओं को भी पैदा किया, उन कन्याओं के नाम रोहिणी और गान्धारी था, रोहिणी रुद्र के समान सुन्दर कांतिमयी थी और गान्धरी भी परम यशस्वनी थी। रोहिणी ने चार कन्याओं को पैदा किया, वे चारों कन्याऐं संसार में प्रसिद्ध मानी जाती हैं। उन कन्याओं के ये नाम हैं। सुरुपा, हंसकीला, भद्रा, कामदुधा हैं। सुरुपा और कामदुधा ने दो पुत्रों को पैदा किया और हंसकीला ने कुछ मनुष्यों और महिषों को पैदा किया, और भद्रा ने गन्धर्वों को पैदा किया कि गन्धर्व उच्चैः श्रवाप्रभृत्ति श्वेत, लाल, पिशग, हरे, रुद्र, तथा अर्जुन वर्ण के आकाश में शीघ्र चल

ने वाले थे। ये ह गन्धर्व योनि में पैदा हुये थे। इन गन्धर्वों ने देवताओं के कार्य में सहायता की थी। इसके बाद सती सुरभी ने दक्ष नाम का एक वृषभ पैदा किया, वह वृषभ चन्द्रमा की कान्ति के समान सुन्दर, गले में नीलमणि के बने हुये शुभ पत्र की शोभा से युक्त था। वह वृषभ अमृत के प्रभाव से उत्पन्न हुआ था, सती सुरभी ने उस वृषभ को महादेव जी के वाहन के लिये दे दिया। ये आदित्य गण, विश्वेदेवगण और साध्यगण सभी धर्म के पुत्र माने जाते हैं। मैंने आपसे कश्यप के पुत्रों, आदित्यों और रुद्रगणों का वर्णन किया है।

अरिष्टनेमि ने अपनी स्त्रियों से सोलह सन्तानों को उत्पन्न किया। बहुपुत्र के चार सन्तानें विद्युत के नाम से पुकारी जाती हैं। देवर्षि कृशाश्व के पुत्र देवप्रहरण के नाम से प्रसिद्ध हैं। वे हर एक हजार युग के बीत जाने पर पैदा होते हैं। हे ब्राह्मणो ! ये तैंतीसगणों में अलग अलग हुये देवगण छन्दोज माने जाते हैं। जिस तरह संसार में रोजाना सूर्य निकलता और डूबता है, उसी प्रकार ये देवगण भी हर एक युगों में उत्पन्न होते हैं।

ऋषि बोले—हे सूतजी ! ये सभी देवगण अपने किस प्रभाव और कर्म से प्रसिद्ध हुये, और ब्रह्मा, विष्णु, महादेव जी का इन सब में आपस में क्या अन्तर है। आप हमको इन सब के विषय में विस्तार पूर्वक बतलाइये।

सूत जी बोले—हे ऋषियो ! अब मैं आपको उन तीनों के आपस के अन्तर को बताऊंगा, आप सब प्रसन्न चित होकर सुनिये स्वयम्भू की तीन मूर्तियाँ मानी गयी हैं-राजस गुणमयी, तामसगुण-मयी, और सात्विक गुणमयी हैं। ये सभी मूर्तियाँ समय समय पर पैदा होती हैं। श्रेष्ठ ब्राह्मणो ! इन सब के पारस्परिक अन्तर नहीं बतलाये जा सकते हैं, क्यों कि इनमें पारस्परिक तीनों गुणों को घटने बढ़ने का कारण विग्रह और अनुग्रह दो तरह के बन्धन माने

जाते हैं। बन्धन निवृति और प्रवृति के होते हैं। उन त्रिमूर्ति में ब्रह्माजी की मूर्ति रजोगुणी है रुद्र की मूर्ति तमोगुणी है और विष्णुजी की मूर्ति सतोगुणी है। अब उनके कर्मों का वर्णन कर रहा हूँ। ब्रह्मा जी की जो रजोगुणी मूर्ति है वह रजोगुण से युक्त प्रजाओं को उत्पन्न करती है जो भगवान विष्णु की सतोगुण से युक्त सतोगुणी है, वह प्रजाओं का पालन करती है। इसके बाद जो रुद्र की तीसरी तमोगुणों से युक्त तमोगुणी है, वह समय समय पर सभी प्रजाका संहार करती है। जिस समय रजोगुण के संयोग से ब्रह्माजी की मूर्ति प्रकट होती है उस समय भगवान विष्णु की पौरुषी मूर्ति अपने सतोगुण के संयोग से निवृत्ति हो जाती है जिस समय तमोगुण के संयोग से रुद्र की तमोगुणी मूर्ति प्रकट होती है उस समय ब्रह्माजी की रजोगुणी मूर्ति निवृत हो जाती है। भगवान विष्णु की सत्व-गुण के प्रभाव से जिस समय मूर्ति प्रकट होती है उस समय उनकी काल संज्ञक मूर्ति पैदा नहीं होती है। त्रिलोक में इस प्रकार भगवान के नाम कर्म और रूप के अनुसार सृष्टि के पालन और संहार के बन्धनों के कारण निवृत होते रहते हैं। जिस समय तक ब्रह्माजी की सत्ता कायम रहती है, उस समय तक रुद्र की मूर्ति का अस्तित्व नहीं रहता है। अतः इसी प्रकार जिस समय पुरुष की सत्ता रहती है, तब तक ब्रह्माजी की मूर्ति तथा रुद्र की मूर्ति की सत्ता नहीं रहती है। जिस समय रुद्र की मूर्ति की सत्ता रहती है उस समय तक ब्रह्ममूर्ति तथा पुरुष मूर्ति का अस्तित्व नहीं रहता। जिस प्रकार आश्रय, भेद और निर्मलता के कारण कई प्रकार के ढंग में होकर रक्त पीतादि विविध रूपों में लक्षित होते हैं उसी प्रकार भगवान स्वयम्भू सत्व, रजस और तमोगुण के कारण विष्णु, ब्रह्मा, रुद्र के रूप में प्रकट होते हैं। वह एक ही स्वयम्भू तीन ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र के रूप में व्याप्त है। एक ही स्वयम्भू की ये तीन मूर्तियाँ हैं। ये मूर्तियां वाही, पौरुषी और तीसरी अन्तकारी काल की मूर्ति हैं। रजोगुणी मूर्ति प्रजा को पैदा करती है सतोगुणी मूर्ति प्रजा का पालन करती है तथा तीसरा

तमोगुणी मूर्तिपूजा का संहार करती है। उस रजोगुणी ब्रह्माजी की मूर्ति से मरीचि और कश्यप जी पैदा हुए। प्रजा का संहार करने वाली तमोगुणी मूर्ति से रुद्र पैदा हुए और जो सतोगुणी भगवान विष्णु की मूर्ति है उनसे विष्णु जी पैदा हुए। अतः इस तरह त्रिलोकी में स्वयम्भू की ये तीन मूर्तियां प्रसिद्ध हैं। ये तीनों मूर्तियाँ सम्पूर्ण प्रजा के विविध प्रयोजनों को सिद्ध करने वाली हैं। मैं आपसे स्वयंभू की ब्राह्मी, वैष्णवी और रौद्री इन तीनों मूर्तियों का वर्णन कर चुका हूँ। स्वयम्भू के पृथक्त्व और एकत्व को देखने वाले उनकी प्रतिष्ठा और मर्यादा को जानने वाले तत्व दर्शी ऋषियों ने स्वम्भू की एक मूर्ति वेदों, में धर्मशास्त्रों में, ग्रन्थों में निरूपित की है। स्वयम्भू की इस एकतत्व और पृथकत्व की बात पर प्रजाओं में भिन्न भिन्न तरह के मत हैं यह सबसे अच्छा पवित्र है यह अच्छा नहीं है ऐसा विचार रखते हैं। प्रजाओं में कोई तो ब्रह्माजी को ईश्वर मानते हैं कोई शिवजी को मानते हैं तो कोई भगवान विष्णु को ईश्वर समझते हैं। संसार में स्वयम्भू से अवश्य रूपों और नामों से देवताओं के रूप में पुकारे जाते हैं। इसीलिये जो मनुष्य इन तीनों त्रिमूर्तियों में किसी की भी बुराई करता है वह तीनों की बुराई मानी जाती है। जो मनुष्य इस तरह की भावना रखकर इन तीनों मूर्तियों को एक रूप में मानता है वह मनुष्य ब्रह्मवादी माना जाता है। विद्वान पुरुषों को देवताओं की बुराई नहीं करनी चाहिये। जो मनुष्य इन तीनों में एक की भी पूजा करता है वह तीनों की पूजा करता है। इस कारण इन तीनों देवताओं में कोई अन्तर नहीं माना जाता है। न इनमें एकत्व और पृथकत्व का भी विचार होता है। इनके एक होने का अथवा बहुत होने का पार तो कोई भी मनुष्य नहीं जान सकता है। अतः तीनों कालों में गुण भेद के वश होकर वे सभी प्रजाओं

को पैदा करके पालन करते हैं और समय आने पर स्वयं ही उनका संहार भी करते हैं। अतः वे तीनों एक ही रूप माने जाते हैं। स्वयं प्रजापति ब्रह्मा जी ही रजोगुणमय होकर प्रजा की सृष्टि करते हैं औ: सत्वगुणी होकर प्रजा का पालन करते हैं। इसके बाद फिर वही तमोगुणी होकर प्रजा का संहार करते हैं। हे ब्राह्मणो! एक आदि देव ही ब्रह्मा, रुद्र, इन्द्र, लोकपाल, नारायण, ऋषि, दानव इत्यादि नामों से पुकारे जाते हैं। ब्रह्माजी और विष्णु जी प्रत्येक मन्वन्तर में और प्रत्येक कल्प में पुनः पुनः अवतार ग्रहण करते हैं। ब्रह्माजी अनुग्रह वश होकर अपने तेज, यश, बुद्धि, ज्ञान, और अपने पराक्रम इत्यादि गुणों से युक्त अपने समान प्रजाओं के रूप में उत्पन्न होते हैं। ब्रह्माजी ने रजोगुण युक्त होकर राजसी मूर्ति में अपने अंश से मरीचि और कश्यप जी को पैदा किया फिर ब्रह्माजी ने तमोगुणी होकर अपने अंश से कालरूपी रुद्र को पैदा किया और इसके बाद सत्वगुणमयी सात्विकी मूर्ति में पुरुष के अंश से भगवान विष्णु को पैदा करते हैं। ब्रह्माजी के अंश से पैदा होने वाली तीनों मूर्तियाँ तीनों कालों में पैदा हुए। कल्पान्त के समय में वह सप्तऋषि दिवाकर की मूर्ति में प्रकट होकर संवर्तक नाम के आदित्य होकर तीनों लोकों को भस्म करता है, काल होकर फिर वे ही रुद्र रूप में प्रजा का संहार करते हैं। विष्णु भगवान समय समय पर अनेक रूप और नामों के द्वारा प्रजा का पालन करते हैं। ब्रह्माजी की सत्वगुणमयी जो पौरुषी मूर्ति है, उसी के अंश से स्वायम्भुव मन्वन्तर में वे प्रभु आकूति के गर्भ से पैदा हुए। इसके बाद स्वारोचिष मन्वन्तर में वे प्रभु तुषिताके गर्भसे तुषित देवगण के साथ पैदाहुए फिर औत्तम मन्वंतरमें वे तुषित नामसे पुकारे जाते हैं। वशवर्ती देवो के थाथ पैदा होने के कारण वे हरिवशवर्ती रूप में पुकारे जाते हैं।

इसके बाद फिर वे सत्या के गर्भ से पैदा होने के कारण सत्य नाम से पुकारे जाते हैं। तामस मन्वन्तर में वे हरि हर्य्या के गर्भ से हरि नाम के देवों के साथ हरि रूप में पैदा होते हैं। चारिष्णव मन्वन्तर में वे हरि फिर विकुण्ठा के गर्भ से आभूतिरजस नाम के देवों के साथ वैकुण्ठ नाम से उत्पन्न हुये। चाक्षुष मन्वन्तर में वे धर्म के रूप में नारायण देव साध्य देवगणों के साथ साध्य रूप में पैदा हुए। वैवस्वत मन्वन्तर में वे कश्यप के संयोग से अदिति के गर्भ से वामन रूप में प्रकट हुए। उन्होंने केवल तीन पगों में ही पूरी पृथ्वी को नापकर समस्त देवों के साथ इन्द्र को दे दिया। सातों मन्वंतरों में वे प्रजापति की सात मूर्तियाँ पैदा हुईं। वामन भगवान अपने शरीर से इस सारे संसार में प्रविष्ट हो गये इस संसार में जिन जिन देवों के अंश से जो जो देवता पैदा होते हैं वे अनुग्रह बल तेज, बुद्धि, ज्ञान और पराक्रम में एक समान होकर पैदा होते हैं। इस संसार में जो जो गौरवशाली श्रीमान जीव या पदार्थ पैदा होते हैं वे सभी भगवान विष्णु के अंश से पैदा होते हैं। एक ही ईश्वर अपनी महा महिमामयी प्रभु शक्ति से अनेक रूपों में पैदा होते हैं और फिर अनेक रूपों में होकर वे एक रूप में हो जाते हैं। इसीलिये वे आदि देव प्रजापति ब्रह्मा जी के तेजोभेद के सभी मन्वंतरों में अच्छे मनवासी स्थावर जंगम सभी प्रजाएँ पैदा होती हैं, और वे ही सृष्टि के शुरू में पैदा होकर महाप्रलय पर्यन्त तक अपनी सत्ता रखते हैं और कल्प के अन्त में प्रत्येक बार रुद्र ही प्रजाओं का संहार करते हैं। योगेश्वर भगवान अपने योग बल से सूर्य के तेज के समान अपने और दूसरों के हजारों प्रति मूर्तियां बनवाकर उनके साथ व्यवहार करते हैं और अपनी अपनी कठिन तपस्या के द्वारा सभी भोगों को प्राप्त करते हैं। इसके बाद वे फिर सबका नाश करते हैं।

श्री वायु महापुराण का कश्यप प्रजा सृष्टि नाम का छयासठवाँ अध्याय समाप्त हुआ

—

सड़सठवाँ अध्याय

[कश्यपजी की प्रजाओं की सृष्टि]

ऋषि बोले—सूतजी के इस प्रकार कहने पर सभी ऋषियों ने इस प्रकार कहा कि हे रोम हर्षण ! सातों मन्वन्तरों में इन्द्र, विष्णु इत्यादि ये देव किस प्रकार पैदा हुए। उन श्रेष्ठ ऋषियों के इस तरह पूछने पर सूतजी ने सादर पूर्वक कहा—

सूत जी बोले—हे ऋषियो ! प्रत्येक मन्वन्तरों में प्रजा की सृष्टि करने हेतु ब्रह्माजी ने अपने मुख से जिन जिन देवताओं को पैदा किया वे सब मन्त्रमय शरीर कहे जाते हैं। (१) दर्श, पौर्णीमास, बृहत्, रथन्तर, आकूतिकी, आकूत की गिनती, वित्ति सुवित्ति, कृति, अधीष्ट अधीति, और विज्ञाति इत्यादि ये बारह मनु हैं ये बारह मनु ब्रह्माजी के पुत्र माने जाते हैं। ये बारह मनु बारह वर्षों के समूह सूचक माने जाते हैं। ब्रह्माजी ने इन बारह पुत्रों को देखकर कहा कि हे जय गण ! तुम सब और दूसरे देवताओं को पैदा करो, तुम लोग स्त्री परिग्रह, अग्नि होत्र, और यज्ञ इत्यादि करना और शुभ कार्यों को पूरा करो, ऐसा कह कर ब्रह्मा जी वहीं पर अन्तर्धान हो गये। उन सभी ब्रह्माजी के पुत्रों ने पितामह की बात न मान कर और समात संसार के अनेक कर्मों में अनेक दोष देखकर मनसा, वाचा, कर्मणा सिद्ध होने वाले कर्म को छोड़कर वे यम नियमादि के साथ रहने लगे। वे सभी सांसारिक कार्यों के कर्मों के फलों के अस्थायी फल को देखकर और सन्तानों की निन्दा करते हुये ममता और आलस्य से परे हो गये। इस प्रकार ब्रह्मज्ञान का सहारा लेकर वे अपने असली तेज और बल का संचय करके मुक्ति पाने के लिए प्रयत्न करने लगे। उन सब को इस प्रकार देखकर ब्रह्माजी को क्रोध पदा हुआ और फिर ब्रह्माजी ने उप निरुत्साही देवों से इस प्रकार कहा कि हे वत्स। मैंने तुमको सृष्टि पैदा करने के लिए ही पैदा किया था। मैंने तुमको दूसरे बलव से पैदा नहीं किया और तुमसे यह भी कहा था कि तुम

लोग सन्तान पैदा करो और यज्ञ इत्यादि शुभ कार्यों को करो। लेकिन तुमने हमारी बात का उल्लंघन करके वैराग्य की ओर जाते हो, मैं तुम लोगों का अनादर करते हुए शाप देता हूं कि तुम सात बार इस पृथ्वी पर जन्म लोगे। ब्रह्माजी के इस तरह शाप देने पर जय नाम के देवगण उनकी स्तुति करने लगे, हे प्रभो! आप हमारे अपराधों को क्षमा करें हमने अज्ञान वश होकर ऐसा कार्य किया है। उन जय नामक देवों की स्तुति करने पर ब्रह्माजी बोले कि इस लोक में कोई भी देव, दानव, मनुष्य बिना मेरी आज्ञा के स्वतन्त्रता पूर्वक व्यवहार नहीं कर सकता, मैं इस पूरे संसार में व्याप्त हूँ मेरी बिना इच्छा के कोई भी शुभ या अशुभ कार्य नहीं कर सकता है। इस पूरे संसार में जो भी कुछ सत् या असत् पदार्थ हैं उन सबमें मैं व्याप्त हूँ। मैंने सृष्टि के बढ़ने के कारण ही यह सब कार्य शुरू किये हैं। इस सम्पूर्ण संसार के प्राणी तथा जीव समूह जो भी सोचते विचारते हैं वह सब हमको मालूम रहता है। यह सम्पूर्ण स्थावर जंगात्मक संसार मेरे बनाये हुए आशामय तत्व में स्थित है। उसे मिटाने की हिम्मत किसी की नहीं हो सकती। इस संसार में हमारी इच्छा के विरुद्ध कोई कार्य नहीं कर सकता है जय नाम के देवगणों को जिनको कि ब्रह्माजी ने शाप दिया था उनसे इस प्रकार कहकर फिर उसने कहा–कि हे देवगणो। तुमने पहले मेरे साथ बुरा व्यवहार करके संसार के कार्यों से ऊबकर सन्यास ले लिया था और उसी भावना से तुम्हारे किये गये प्रयत्न भी नष्ट हो गये। लेकिन इसका फल तुम्हारे सबके लिये अच्छा होगा, तुम्हारे वे जन्म सुखदायी होंगे। हे देवो! तुम्हारी वह पैदायश स्वयं ही होगी, और स्वायम्भुव से वैवस्वत मन्वन्तर तक छैः मन्वन्तरों में तुम अविद्या और मोह

रहित होकर जन्म को सुख प्राप्त करोगे। इसके बाद उन जय नाम के देवगणों से इस प्रकार बात करके फिर ब्रह्माजी ने उनको एक पुराना श्लोक सुनाया। जिसका अर्थ इस प्रकार है कि ऋग् यजु साम तीनों वेदों की विद्या, ब्रह्मचर्य, सन्तानोत्पत्ति, श्राद्ध यज्ञ तथा दान इन समस्त सत्कर्मों के करने वाले सत्वगुण से युक्त होकर दूसरों के द्वारा प्रशंसित जीवन बिताते हुए निवास करते थे।

ब्रह्माजी ने ऐसा श्लोक सुनाकर उन जय नामक देवगणों से फिर कहा–हे देवगणो! अन्तिम वैवस्वत मन्वन्तर के समाप्त हो जाने पर आप हमारे समीप पुनः आओगे। और सभी तुम्हें सदा रहने वाली सिद्धि मिलेगी वह कहकर ब्रह्माजी वहीं अन्तर्धान हो गये। इसके बाद वे देवगण निर्भय हो गये और अणिमा आदि से युक्त होकर योग के अभ्यास में मन लगाने लगे। इससे उन सबके शरीर समुद्र के समान विशाल बारह सरोवर बन गये जो 'जय' नाम वाले सरोवर कहलाये।

इसके बाद स्वायंभू मन्वन्तर में वे देवगण अजिता के गर्भ से रुचि के १२ पुत्रों के रूप में पैदा हुए। जो अजित गण कहलाये। इनके नाम इस प्रकार हैं–

विधि मुनय क्षेत्र, नन्द, अव्यय, प्राण अपान, सुधामा, क्रतु शक्ति, ध्रुव और स्थिति ये बारह अजित हैं जो ब्रह्मा के मानस पुत्र कहलाते हैं। ये स्वायम्भुव मन्वन्तर में यज्ञ के भाग देवों के साथ ही अधिकारी माने गये।

पुनः ये स्वारोचिष मन्वन्तर में तुषिता के गर्भ से मनु पुत्र हुए।

उस समय ये तुषिय और प्राण इन दो नामों से प्रसिद्ध हुये। यज्ञ का भाग भी पाने का इन्हें अधिकार मिला। फिर औत्तम मन्वन्तर में ये सत्या के गर्भ से उत्तम मनु के पुत्र रूप में उत्पन्न हुये। और उसी मन्वन्तर में ये सत्य नाम से प्रसिद्ध हुए। पुनः तामस नामक मन्वन्तर में तामस की पत्नि हर्या में हरि नाम से उत्पन्न हुये। इसके बाद चारिष्णव नामक मन्वन्तर में वे वैकुण्ठ नाम से प्रसिद्ध हुये। और साध्या के गर्भ से धर्म के बारह पुत्रों के रूप में उत्पन्न हुए। इसके बाद ये देवगण वैवस्वत मन्वन्तर के प्रारम्भ में त्रेता युग के प्रारम्भिक समय में अंश भाग से अदिति में कश्यप के संयोग से उत्पन्न हुए। इस प्रकार इस वैवस्वत मन्वन्तर में इनकी १२ आदित्यों के नाम से ख्याति हुई।

ब्रह्मा के शाप से होने वाली देवताओं की इन सात उत्पत्तियों का वर्णन जो श्रद्धा पूर्वक पढ़ते हैं वे पाप में लिप्त नहीं होते। अब आप लोग क्या सुनना चाहते हो सो कहो

ऋषियों ने कहा—हे सूतजी! अब आप हमको दैत्य, दानव, गन्धर्व, उरग, सर्प, राक्षस, भूत पिशाच, पशु, पक्षी, लता और वृक्षादि की उत्पति तथा विनाश का वृतान्त सुनाने की कृपा करो।

सूत जी बोले–हे ऋषियों! कश्यप के द्वारा दिति के दो पुत्र हुए। वे दोनों पुत्र उनकी अन्य सभी सन्तानों में सबसे ज्येष्ठ (बड़े) थे। कश्यप के अश्वमेध यज्ञ में उनका प्रथम पुत्र सौतल दिवस के समय गर्भ से निकल कर पुरोहित के सिंहासन पर जा बैठा। इस अद्भुत कर्म के कारण वह हिरण्यकशिपु कहलाया।

ऋषियों ने पूछा–हे प्रभो! दैत्यों का स्वामी हिरण्यकशिपु की कथा को विस्तार पूर्वक सुनाइए।

सूतजी बोले–हे ऋषियो! प्राचीन काल में पुष्कर में कश्यप का एक अश्वमेध यज्ञ हुआ।

उसमें सभी देवता, ऋषि, गन्धर्व समूह ने आकर उस यज्ञ की शोभा को बढ़ाया। उस यज्ञ में शास्त्रीय विधि के अनुसार आख्यान आदि के लिये पाँच सोने के सुन्दर सिंहासन स्थापित किये गये। तीन पर कुशा के आसन बिछे थे, चौथे पर कूर्च (कुशा की मुट्ठी) थी और पाँचवे पर फलक था। चार मुख्य पुरोहतों के लिये उन चार की स्थापना की गई थी। उनमें से पाँचवाँ जो सर्वश्रेष्ठ आसन था वह होता के लिये था। वह दिव्य आसन नीचे से ऊपर तक स्वर्णमय था। गर्भवती दिति कश्यप की पत्नी उनकी बगल में बैठी थीं। उनके उदर में दस हजार वर्ष का गर्भ था। ठीक उसी समय वह गर्भ माता के उदर से निकलकर उस स्वर्ण सिंहासन पर जा बैठा। वहीं से पाँचवे वेद का व्याख्यान देने लगा। उस बालक का ऋषियों ने तदनुकूल नाम रख दिया। इस अद्भुत कर्म के कारण उसको सबने हिरण्यकशिपु कहा। उसका छोटा भाई हिरण्याक्ष था और छोटी बहन सिंहिका थी। वह सिंहिका विप्रचित्ति की पत्नी और राहु की माता हुई।

उस दैत्यों में श्रेष्ठ हिरण्यकशिपु ने बहुत ही कठोर तप किया। एक लाख वर्ष तक नीचे सिर करके निराहार रहकर तप किया। हे ब्राह्मणो! इससे ब्रह्माजी उस पर प्रसन्न हुए और उसे वरदान दिया; जिससे उसने सभी देवताओं के धर्मों को प्राप्त कर लिया तथा सभी जीवों द्वारा मृत्यु को प्राप्त नहीं होना और योगबल द्वारा देवताओं को पराजित करने का वरदान प्राप्त किया। इसके अलावा उसने वर मांगा कि असुर और दानव भी देवताओं के समान पराक्रम शाली हो जांय। वायु में जो महान ऐश्वर्य है वह भी हमें प्राप्त हो जाय। ब्रह्माजी उसकी इच्छानुसार वरदान देकर अन्तर्धान हो गये।

उसके ऐश्वर्य को पुराने लोग श्लोकों में गाया करते थे। वास्तव में वह हिरण्यकशिपु बड़ा प्रभावशाली था। यह बात सबको मालूम है कि उस हिरण्यकशिपु को मारने के लिये नरसिंह रूप वाले विष्णु भगवान स्वयं ही आये थे। उन्होंने नखों से उस दैत्य को

छाती को फाड़ डाला। किन्तु उनके नख न तो गीले हुए न सूखे ही रहे, ऐसा कहा जाता है।

हिरण्याक्ष के महा बलशाली उत्कुर, शकुनि, कालनाभ, महानाभ और भूत सन्तापन नामक पाँच पुत्र थे। हिरण्याक्ष के दो पुत्र बड़े वीर थे जो देवों द्वारा पराजित नहीं किये जा सकते थे। उनके पुत्र पौत्रादि एक लाख थे जो वाडेयगणों के नाम से विख्यात थे। ये सब तारकामय संग्राम में नष्ट हो गये।

हिरण्यकशिपु के चार बलवान पुत्र थे। सबसे बड़े का नाम प्रहलाद था। उससे छोटा अनुह्लाद था उनसे छोटे संह्लाद और ह्रद थे। अब ह्रद के पुत्रों के नाम सुनिये। ह्रद के ह्राद तथा निसुन्द नामक दो पुत्र हुए उसमें निसुन्द के सुन्द और उपसुन्द दो पुत्र हुए। सुन्द के ब्रह्माण्ड और मूक और मारीच हुए जो ताड़का से उत्पन्न थे। यह ताड़का रामचन्द्रजी के द्वारा मारी गई। मूक को किरात युद्ध में सव्यसाची अर्जुन ने मारा। इन दैत्य के वंशधर तीन करोड़ तक थे। उन सबका संहार सव्यसाची ने ही किया।

अनुल्हाद के पुत्र वायु और सिनीवाली हुए। इनके पुत्र पौत्रादिकों की संख्या लाखों थी। जो सबके सब हलाहल गण के नाम से पुकारे जाते हैं। प्रहलाद का पुत्र विरोचन हुआ। उसके पांच छोटे भाई और कहे जाते हैं जिनके नाम गवेष्ठी, कालनेमि, जम्भ, वाष्कल और शुम्भ हैं। इनमें शुम्भ निशुम्भ और विष्वकसेन ये तीनों गवेष्ठी के पुत्र थे। जम्भ का पुत्र शतदुन्दुभि था। जम्भास्य, शतदुन्दुभि, दक्ष और खण्ड ये चार दम्भ के पुत्र थे। विरोध, मनु, वृत्रायु और कुशलीमुख ये चार वाष्कल पुत्र थे। अब कालनेमि के पुत्रों के वर्णन करता हूँ सो सुनो–

कालनेमि के ब्रह्मजित, क्षत्रजित, देवान्तक और नारान्तक पुत्र

थे। शुम्भ के पुत्र इस प्रकार थे–धनुक असिलोमा, नाबल, गोमुख, गवाक्ष और गोमान ये शुम्भ के पुत्र कहे गये हैं। विरोचन का केवल एक पुत्र हुआ जिसका नाम बलि था जो परम प्रतापी था। उस बलि के सौ पुत्र हुए जो सबके सब राजा हुए। उन सौ पुत्रों में चार पुत्र महान पराक्रमी और प्रबल थे। उनमें सबसे बड़ा सहस्रबाहु बाण था, यह बाण बड़ समृद्धशाली देव था। अन्य तीन कुम्भनाभ गर्दभाक्ष और कुशि थे। इनके अतिरिक्त अन्य भी थे। बलि की शकुनी और पूतना नामक दो पुत्री थीं बलि के पुत्र पौत्रों की संख्या हजारों तक थी वे सब बलिगण कहलाते थे। वे सब परम विक्रमशील थे। इन्द्र के समान तेजस्वी बाण की राजधानी लौहित्यपुर में थी।

पुत्रों के नष्ट हो जाने पर दिति ने कश्यप जी को सेना द्वारा संतुष्ट किया और वरदान मांगा कि भगवन्! आदिति के पुत्रों ने मेरे सभी पुत्र नष्ट कर दिये हैं अतः इन्द्र को भी मारने वाला एक पुत्र मुझे वरदान में दीजिए। ऋषि ने कहा–ऐसा ही होगा। दिति ने हर्षित होकर कुशल वन में तपस्या आरम्भ की उस समय सहस्राक्ष इन्द्र ने उसकी भली भांति परिचर्या की। उससे प्रसन्न होकर दिति ने इन्द्र से कहा।

दिति बोली–हे देवों में श्रेष्ठ इन्द्र! तुम्हारे कल्याण के अभी दश वर्ष और शेष हैं जब तुम अपने भाई को देखोगे। तब मेरी सभी अभिलाषाएँ पूर्ण ह जायेंगी उसके साथ समस्त त्रिलोक विजय का मैं भी सुख अनुभव करूँगी। मध्याह्न के समय ऐसा कह कर वह इन्द्र की दोनों जांघों पर सिर रखकर सो गई इन्द्र ने अवसर पाकर अपवित्र अवस्था में दिति के गर्भ में प्रवेश किया और गर्भ को वज्र से सात भागों में काट दिया।

वह गर्भ रोने लगा। इन्द्र ने उसे रोने से मना किया और फिर उस कटे हुए सात टुकड़ो को भी पुनः सात सात टुकड़ों में काट दिया। तब तक दिति जग गई और इन्द्र से बोली–इसे मारो मत, मत मारो। इन्द्र बज्र सहित बाहर निकल आया और हाथ जोड़कर दिति से बोला–हे देवि! आप अपवित्र अवस्था में सो गई थीं। आपके पैरों पर केश बिखरे हुए थे। ऐसे अवसर को पाकर मैंने अपने शत्रु का संहार कर दिया। मुझे क्षमा कर दीजिये।

दिति को इस गर्भ से इस प्रकार निष्फल हो जाने पर बड़ा दुख हुआ। फिर उसने इन्द्र से कहा–यदि मेरे ही अपराध से यह मेरा गर्भ निष्फल हुआ है तो इसमें कोई तुम्हारा अपराध नहीं। क्योंकि शत्रु का बध करने में कोई दोष नहीं। इससे मैं तुम्हें शाप नहीं दे रही हूँ। तुम्हारा मंगल हो। अब मेरे गर्भ का कल्याण करो। स्वर्ग में मेरे इन्द्र पुत्रों को सात स्थान प्राप्त होने चाहिये। मेरे ये पुत्र वायु के सात स्कन्धों में मरुत नाम से विचरण करें। उनके एक एक गण में सात-सात मरुत हों। इनका प्रथम स्कन्ध पृथ्वी पर, दूसरा सूर्य मण्डल पर, तीसरा चन्द्रमा में, चौथा ज्योतिष मण्डल में, पाँचवाँ स्कंध ग्रहों में, छटा सप्तर्षि मन्डल में तथा अन्तिम सातवां ध्रुव मन्डल में होगा। मेरे ये पुत्रगण ऊपर कहे स्कन्धों में सदा घूमा करें। और तुम्हारे द्वारा रखे गये 'मरुत' नाम से प्रसिद्ध हों। इस प्रकार माता ने तथा पुत्र इन्द्र ने उन सबका नामकरण भी किया।

इन्द्र के द्वारा 'मा रोदी' अर्थात् मत रोओ कहने पर उन सबका नाम मरुत पड़ा। उनके अलग अलग नाम इस प्रकार हैं—सत्व ज्योति, आदित्य, सत्य ज्योति, तिर्यक ज्योति, सज्ज्योति, ज्योतिष्मान् और रोहित ये प्रथम स्कन्ध के मरुत गण हैं। ऋतजित, सत्यजित, सुषेण, सेनजित, सत्यमित्र, अभिमित्र, और हरिमित्र, ये द्वितीय मरुत गण हैं। ऋत, सत्य, ध्रुव, धर्ता, विधर्ता, विधारय, ध्वान्त, धुनि, उग्र, भीम, अभियु, साक्षिय, आह्वय, ये तीसरे तथा चौथे स्कंध के मरुत गण हैं। ईदृक, अन्यादृक्, प्रतिकृत, यादृक, ऋक् समिति

और संरम्भ ये पाँचवें मरुत गण हैं। ईदृक, पुरुष, अन्यादृक्ष, चेतस समिता, समिदृक्ष और प्रतिदृक्ष ये एक मरुत गण हैं मरुतिद, सरत, दिश, यजु, अनुदृक्, साम, मानुषीविष, दैत्य, देव ये सात सात के एक गण हैं, ये सभी गण उनचास मरुत गण के नाम से प्रसिद्ध हैं। इनके नाम और संख्याकी गणना इन्द्र और दिति ने की है। इन सबके ठीक प्रकार नाम रखने के बाद दिति ने इन्द्र से कहा कि हे पुत्र ! ये सभी हमारे पुत्र वायु स्कन्धों में घूमा करें, ये तुम इनको इस प्रकार बताओ, ये सभी पुत्र देवताओं के साथ सुख पूर्वक घूमा करें। दिति के इस प्रकार कहने पर देवराज इन्द्र ने हाथ जोड़कर कहा कि हे माता ! आप जिस प्रकार हमसे कहेंगी, हम वैसा ही करेंगे। ये आपके सभी पुत्र देवताओं के समान हैं ये देवताओं के साथ यज्ञ में भाग लेते हैं।

सूतजी बोले—हे ऋषियो ! इन्हीं कारणों से मरुतगण देवताओं के साथ रहते हैं और इन्द्र के भाई होने के कारण इनको अमरत्व प्राप्त हुआ है, ये सभी दिति के पुत्र माने गये हैं ये सभी दिति के पुत्र होकर भी अमर माने जाते हैं दिति मां इस प्रकार का शब्द सुनकर बहुत खुश हुई, और दिति अपने घर चली गई और देवराज इन्द्र भी स्वर्ग को चले गये। जो भी प्राणी इन मरुत गणों की कथा को सुनता और पढ़ता है वह निरोग दीर्घायु होकर सुख और शान्ति प्राप्त करता है।

श्री वायु महापुराण का कश्यप की प्रजा-सृष्टि का वर्णन
नामक ६७वां अध्याय समाप्त।

अड़सठवाँ अध्याय

(कश्यप की सन्तानों की सृष्टि)

सूतजी बोले–हे ऋषियो ! अब मैं दनु के पुत्रों का वृत्तान्त तुम्हारे लिये सुनाता हूं सो सुनो। दनु के वे दोनों पुत्र अपने वंश में परम विख्यात और महान पराक्रमी दैत्य हुए। उन सबमें विप्रचित मुख्य था जिनकी संख्या सौकड़ों थी। वे सब पराक्रमी थे। उन सभी को

वरदान मिले हुए थे, वे तपस्वी, दृढ़ प्रतिज्ञ, परम विवेकी और क्रूर थे तथा मायावी थे। ब्राह्मण धर्म के विरोधी और यज्ञादि से विपरीत बुद्धि वाले थे। उन्हें दानव कहा जाता था। उनके प्रधान दानवों के नाम कुछ इस प्रकार हैं—द्विमूर्धा शंकुकर्ण शंकु निरामय शंकुकर्ण महाविश्व गवेष्ठि दुन्दुभि अजामुख शिल-वामनस मरीचि रक्षक महागार्ग्य अंगिरावृत विक्षोभ्य सुकेतु सुवीर्य सुहृद इन्द्रजित विश्वजित सुरविमर्दन एकचक्र सुबाहु तारक वैश्वानर पुलोमा प्रवीण महाशिरा स्वर्भानु वृषपर्वा महाअसुर मुण्डक धृतराष्ट्र सूर्य चन्द्र इन्द्र तापिन सूक्ष्म निचन्द्र अर्णनाभ महागिरि असिलोमा सुकेश सदबलक गगनमूर्धा कुम्भनाभ महोदर प्रमोदाह कुपथ पराक्रमी हयग्रीव असुर विरूपाक्ष महाअसुर सुपथ अज हिरण्यमय शतमायु शम्बर शरभ और शलभ ये प्रमुख दानव गण कहे गये हैं। सूर्य और चन्द्र ये दोनों पहले असुरों के देवता थे और इस समय ये देवताओं के देवता हैं। दनु के वंश में पैदा हुए ये दानव प्रधान हैं। ये असंख्य और अनन्त सन्तानों वाले हैं।

इनके अलावा एकाक्ष, ऋषभ, अरिष्ट, प्रलम्ब, नरक, इन्द्रबाधन, केशी, शंक, धेनुक, गवेष्ठि गवाक्ष, पराक्रमी, तालकेतु ये दनु के पुत्र मेरे विचार में मनुष्यों के समान धर्म कर्म का आचरण करने वाले हैं।

विप्रचिति के चौदह पुत्र दैत्यों और दानवों के संघर्ष में सिंहिका के संयोग से उत्पन्न हुए। इस कारणवश वे चौदह महान असुर सैंहिकेय के नाम से विख्यात हुए। उन चौदहों के नाम इस प्रकार हैं—शतगाल, बलवान न्यास, शाम्ब, अनुलोम शुचि वातापि सितांशुक, हर कल्प कालनाभ भौम और नरक। इन सबमें बड़े का नाम राहु था जो चन्द्रमा और सूर्य को कष्ट देने वाला था। १४ पुत्र जो सिंहिका हैं ये देवताओं से भी न जीते जाने वाले थे। इनके अलावा

भी एक दस हजार राक्षसों का समूह (ग्रोह) है वह भी सिंहिकेय (गण) के नाम से प्रसिद्ध है। उनको जामदग्न्य परशुराम ने नष्ट किया।

स्वर्भानु की कन्या थी प्रभा, पुलोमा की पुत्री शची थी। मय की पुत्री, उपदानवी और वृषपर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा थी, पुलोमा और कालिका दोनों वैश्वानर की पुत्रियां थीं। प्रभा का पुत्र नहुष था, शचीका पुत्र जयन्त था। शर्मिष्ठाका पुत्र पुरु और उपदानवी का दुष्यन्त नामक पुत्र उत्पन्न हुए। वैश्वानर की दोनों पुत्री कालिका और प्रलोमा, मरीचि पुत्र कश्यप की पत्नी थीं। उन दोनों के एक हजार दानव पैदा हुए। ये पौलोम और कार्तिकेय कहलाये। ये दानव महान बलशाली थे सव्यसाची अर्जुन ने इनका बध किया।

मयदानव के पुत्र भी बड़े बलवान, वीर और पराक्रमी थे। उनके नाम मायावी दुन्दुभि वृष महिष वाजिक और वज्र कर्ण थे। मय दानव की पुत्री का नाम मन्दोदरी था। यह दैत्य दानवों की सृष्टि का वर्णन हुआ। दनायुषा के अरुरु, बाल, जन्म वृत्र और विष ये पाँच पुत्र थे। अरुरु का पुत्र धुन्धु था जो बड़ा ही क्रूर था उसका संहार उतंग के कहने पर कुवलाश्व ने किया।

बलि के दो तेजस्वी और पराक्रमशाली पुत्र थे। कुम्भिल और चक्रवर्मा। यह बलि पूर्व जन्म में कर्ण था। विरुच के भी काल और वर नामक दो पुत्र थे। विष के श्रद्धहा यज्ञहा पशुहा और ब्रह्महा नामक चार क्रूर पुत्र थे।

अब वृत्र का वर्णन सुनाता हूँ सो सुनो–इन्द्र के साथ घोर युद्ध करते समय इस वृत्र के श्वांसों से महाबलशाली भरण पोषण करने वाले बहुत से राक्षसों की उत्पत्ति हुई। उनमें से एक लाख तो शिवजी के अनुचर हैं। शिव के अनुचर ये राक्षस गण सबके सब धार्मिक और ब्रह्मज्ञानी तथा सूक्ष्म मूर्तिधारी हैं।

प्रवाही ने यज्ञ क्षेत्र में सुप्रसिद्ध गायक पुत्रों को पैदा किया जिनके नाम हैं–सत्वन, सत्वात्मक, कलाप, वीर्यवान, कृतवीर्य, ब्रह्मचारी, सुपाण्ड्र, पन तरण्य और सुचन्द्र। ये दशों पुत्र दैतों के गन्धर्व हैं इनका वर्णन मैंने पीछे कर दिया है।

इति श्री वायु पुराण का उपोद्घात् पादका कश्यप प्रजा सर्ग नामक ६८ वाँ अध्याय समाप्त हुआ

उनहत्तरवाँ अध्याय

[कश्यप की प्रजा-सृष्टि]

सूतजी ने कहा–हे ऋषियो ! पुण्यात्मा गन्धर्व और अप्सराएँ मुनि की ही सन्तानें हैं। चित्रसेन, उग्रसेन, अर्णायु अनघ, धृतराष्ट्र, पुलोमा, सूर्यवर्चा, युगपत, तृणपत, कालि, दिति, चित्रण भ्रमिशिरा पर्जन्य, कलि और नारद ये सोलह मुनि के पुत्रदेव गन्धर्व कहे गये हैं। इन सबसे छोटी कल्याणमयी अप्सराएँ हैं जो संख्या में चौंतीस हैं। इनके नाम निम्न प्रकार हैं।

अन्तरा, दारवत्या, प्रियमुख्या सुरोतमा, मिश्रकेशी, चांशी, पर्णिनी, अलम्बुशा, मारीचीपुत्रिका, विधुद्वर्षा, तिलोत्तमा, अद्रिका, लक्षणा, देवी, रम्भा, मनोरमा, सुवरा सुवाहु पुर्णिता, सुप्रतिष्ठता मण्डरीका सुगन्धा सुदन्ता सुरसा हेमा शारद्वती सुवृत्ता कमला सुभुजा और हंसपादा। (गिनने पर इनकी संख्या ३१ होती है) ये लौकिक अप्सराएँ कही जाती हैं। ये मुनि की सन्तान हैं। पूर्व में जिन गन्धर्व पुत्रियों का निर्देश किया है उनके नाम इस प्रकार हैं– सुयशा गान्धर्वी विद्यावती चारुमुखी सुमुखी और बरानना।

इनमें सुयशा के प्रचेता के संयोग से पराक्रमी-यक्षगण उत्पन्न हुए। इनके नाम थे कम्बल हरिकेश कपिल कांचन और मेघमाली। सुयशी की चार अप्सराएँ कन्याएँ कही हैं। उनके नामों को मैं भली भांति जानता हूं–उनमें सबसे बड़ी लोहेयी थीं। उससे छोटी भरता। उसके बाद जो दो थीं उनके नाम कुशांगी और विशाला थे-ये दोनों अनुपम सुन्दरी अप्सराएँ थीं। ये चारों कन्याओं से महापराक्रमी

लोहेय भरतेय कुशांगेय और विशालेय नाम के चार यक्ष पैदा हुए थे। विक्रान्त ने श्रेष्ठ गन्धर्वों के नायक बालेय नामक गन्धर्वों को पैदा किया विक्रय एवं औदार्य गुण से सम्पन्न, महाबलवान एवं पराक्रमी थे। जिनकी नामावली निम्न प्रकार है- वे महावीर चित्रांगद, चित्रवर्मा महाभाग्य शाली चित्रकेतु और बलवान सोमदत्त थे। तीन कन्यायें थीं। जिनके नाम क्रमशः—अग्निका, कम्बला तथा तीसरी वसुमती थी। ये अनुपम रूपवती एवं तेजस्विनी थीं। इन तीन गन्धर्वों की कन्याओं के कुमार नामक गन्धर्व ने तीन पुत्रों को उत्पन्न किया जो प्रमुख गन्धर्व माने जाते थे। ये आग्नेय काम्बलेय और वसुमती नाम वाले थे। महान पराक्रमी औह युद्ध कौशल में निपुण थे। इन गन्धर्व गणों से यह समस्त चराचर लोक व्याप्त हो गया। महात्मा विक्रान्त ने विद्यमान, रूप, विद्या एवं सम्पत्ति से समृद्ध गन्धर्वों को भी उत्पन्न किया। उनके नाम थे हिरण्यरोमा, कपिल, सुलोमा मागध, चन्द्रकेतु, गांग एवं महाबलवान गोद थे। इनके अलावा सुन्दर नैनों वाली शिवा और सुमना नामक दो कन्यायें थीं। उन कन्याओं से विश्रवा ने शैवेय, विक्रान्त और सोमनस नामके गणों को पैदा किया, ये तीनों गण बहुत विद्वान थे, इन तीनों विद्वान गणों से यह लोक व्याप्त हो गया और फिर इन गणों से सौ विद्याधर गण उत्पन्न हुये ये सभी विद्याधर आकाश में बिहार करने वाले थे। इनके बाद फिर विक्रान्त से अश्व के मुख की तरह बहुत से किन्नर उत्पन्न हुये, उन किन्नरों के नाम इस प्रकार हैं—समुद्रसेन, कालिन्द, महानेत्र, महाबल, सुवर्णघोष, सुग्रीव, महाघोष इत्यादि थे। ये सभी किन्नर अश्वमुख धारी थे। हे शांशपायन जी! इसके बाद भी फिर उन्हीं विक्रान्त से मनुष्य मुखधारी किन्नर भी उत्पन्न हुये। उन मनुष्य मुखधारी किन्नरों के नाम भी इस प्रकार हैं-हरिषेण सुषेण, वीरषेण रुद्रदत्त, इन्द्रदत्त, चन्द्रद्रुम, महाद्रुम, बिन्दु, बिन्दुसार इत्यादि थे। ये सभी मनुष्य मुखधारी किन्नर चन्द्रवंश के थे, ये सभी श्रेष्ठ सुन्दर किन्नर लोक में प्रसिद्ध थे। हे ऋषियो! इन किन्नरों से सैकड़ों गण

उत्पन्न हुए, ये सभी गण नाच गान में बहुत चतुर थे। ये सभी यक्षगण लौहेय नाम से लोक में प्रसिद्ध हुए। सुन्दरी सुरविन्दा नाम की कन्या बहुत सुन्दर और सिद्धों के आदर करने योग्य थी। कैरालक ने उपाया के तन नाम के भूतगणों को स्वयं ही उत्पन्न किया था। अब मैं उनके नाम भी आपको बताऊँगा। ये सभी भूतों के गण, काल भवन, निर्देशक और विशेषक नामों से पृथ्वी पर प्रसिद्ध थे और जो आकाश में घूमने वाले भूतों के गणों में श्रेष्ट होते हैं, वे भूत गण इस लोक में भूतनायक नाम से प्रसिद्ध हैं। ये भूतगण पेड़ों पर तथा आकाश में घूमते फिरते हैं। हे ऋषियो! मैंने आपको इस प्रसंग में देव गन्धर्वों के बारे में बताया है। उन देव गन्धर्वों को देवताओं की पूजा करनी चाहिये। नाच गीत में चतुर तथा सभी लोकों में रहने वाले व्यवहार में कुशल देवगण इन गन्धर्वों के साथ, विष्णु सुरगुरु कमल नेत्र नारायण भगवान प्रजापति ब्रह्माजी सार संसार के कल्याण कर्त्ता भगवान महादेव जी, इन्द्र रुद्रगण आदित्यगण और वसुगण, इन सब की पूजा करते थे। देवताओं से पूजित वरिष्ण ने आठ पुत्रों को पैदा किया, इनमें सबसे बड़े का नाम हंस था, कनिष्ठ का नाम अन्यथा बीचके पुत्रों का नाम हहा हूहू था, चौथे पुत्र का नाम धिषण था, पांचवे पुत्र का नाम वासिरुचि था छठे पुत्र का नाम तुम्बुरु था और इसके बाद विश्वावसु नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। इन पुत्रों की पत्निबहुत सी दिव्य सुन्दर अप्सराएँ थीं. इन अप्सराओं के नाम इस प्रकार हैं–वरिष्टा अनवद्या अनवशा अन्वन्ता मदनप्रिया अरुपा सुभगा और मासी इन सबको अरिष्टा ने उत्पन्न किया, तुम्बुक के मनोवती और सुकेशा नाम की दो कन्यायें थीं। इनके अलावा पंचचूड़ और दैविकी नाम की दस सुन्दर स्वर्ग की अप्सराएँ हैं. उन अप्सराओं के नाम ये हैं–मेनका सहजन्या पर्णिनी पुञ्जिक